ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 17 फरवरी 2019

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 17 फरवरी 2019 से 23 फरवरी 2019

माघ शु. – 12 ● वि० सं०–2075 ● वर्ष 61, अंक 07, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 194 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,119 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

दरबारी लाल डी.ए.वी. पीतमपुरा में वैदिक मूल्यों पर कार्यक्रम

आर्य समाज दरबारी लाल डी.ए.वी. मॉडल स्कूल पीतमपुरा में वैदिक मूल्यों के प्रति आस्था हेतु अनेक कार्यक्रम आयोजित किए गए। प्रत्येक दिवस प्रार्थना सभा में गायत्री मन्त्रोच्चारण के अतिरिक्त वेद मंत्रों का उच्चारण अर्थ सहित किया गया। इसके साथ ही डी.ए.वी. गान भी गाया गया।

साप्ताहिक यज्ञ के अन्तर्गत वेदों का महत्त्व व भजन गायन भी हुआ जिसमें विद्यार्थियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

विद्यार्थियों ने नैतिक मूल्यों पर आधारित नाट्य मंचन अन्तः कक्षा प्रतियोगिता के अन्तर्गत प्रस्तुत किया। विद्यार्थियों ने वेद मन्त्रोच्चारण किया व प्रथम द्वितीय स्थान प्राप्त किए। इसके अतिरिक्त आर्य समाज के नियम भी विद्यार्थियों से सुने गए।

स्वामी श्रद्धानंद बलिदान दिवस पर यज्ञ आयोजन किया गया। स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन व उनके क्रिया कलापों के विषय में विद्यार्थियों को बताया गया।

बच्चों के व्यक्तित्व व चारित्रिक विकास हेतु अनेक गतिविधियाँ विद्यालय में संपन्न की गई।

डी.ए.वी. सेक्टर-49, गुरुग्राम में 'विज्ञान प्रदर्शनी' आयोजित

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सेक्टर–49, गुरुग्राम में क्षेत्रीय स्तर की 'विज्ञान प्रदर्शनी' का भव्य आयोजन सी.बी.एस.ई द्वारा किया गया।

इस प्रदर्शनी में पंचकूला क्षेत्र के लगभग 65 विद्यालयों ने भाग लिया। इन विद्यालयों के विद्यार्थियों द्वारा 102 मॉडल प्रस्तुत किए गए जो उनकी मेहनत और वैज्ञानिक सोच को प्रदर्शित कर रहे थे।

इस प्रदर्शनी के उद्घाटन समारोह में मुख्य अतिथि डॉ. जोसेफ इमेन्युअल ने वहाँ उपस्थित सभी विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए उन्हें अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति को सदैव जगाए रखने के लिए कहा। इसके साथ ही डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सेक्टर–14, गुरुग्राम की संस्थापक प्रधानाचार्या श्रीमती अनिता मक्कड़, वाईस चेयरमेन श्री योगेश मुंजाल तथा प्रबंधक श्रीमती आदर्श कोहली उपस्थित थी। इनका स्वागत करते हुए विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती चारु मैनी ने प्रतीक स्वरूप 'नई पौध' भेंट की। तदुपरांत 'दीप प्रज्ज्वलन' तथा शास्त्रीय नृत्य 'भूमि मंगलम' के साथ इस प्रदर्शनी का शुभारंभ किया गया।

तत्पश्चात् प्रदर्शनी में लगाए गए मॉडल

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

बी.बी.के. डी.ए.वी. अमृतसर के प्रो. डॉ. ललित गोपाल पराशर को मिला 'गुरू द्रोणाचार्य' राष्ट्रीय पुरस्कार

बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर के डिजाईन विभाग के प्रो (डॉ.) ललित गोपाल पराशर को अग्निपथ संस्थान, नई दिल्ली द्वारा 'गुरू द्रोणाचार्य' राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। प्रत्येक वर्ष आयोजित किये जाने वाले सम्मान समारोह का उद्घाटन पदम श्री एवं पदम विभूषित प्रसिद्ध मूर्तिकार श्री राम वी. सुतार द्वारा किया गया। ये वही मूर्तिकार हैं, जिन्होंने हाल ही में स्टेच्यू ऑफ यूनिटी सरदार वल्लभ भाई पटेल जी की मूर्ति अपने हाथों से निर्मित की है। डॉ. ललित गोपाल का यह सौभाग्य रहा कि इन्हें ऐसे कलाकार के द्वारा यह सम्मान प्राप्त करने का सुअवसर मिला।

यह बड़े ही हर्ष एवं गौरव की बात है कि सम्पूर्ण पंजाब से चित्रकला के क्षेत्र में बी.बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज के प्रोफेसर डॉ. ललित गोपाल का ही चयन हुआ। इस सराहनीय योगदान को देखते हुए महाविद्यालय की प्राचार्या डॉ. पुष्पिंदर वालिया एवं डी.ए.वी. संस्था के स्थानीय चेयरमैन श्री सुदर्शन कपूर ने डॉ. ललित गोपाल को शुभकामनाएं देकर आगे भविष्य में भी ऐसे ही उच्च सम्मानों से फलीभूत होने का आशीर्वाद दिया। इस अवसर पर महाविद्यालय की डीन अकादमिक डॉ. सिमरदीप, प्रो. सन्दीप जुत्शी, प्रो. कामायनी, प्रो. किरण गुप्ता, प्रो.मनदीप कौर एवं प्रो. रजनी आदि उपस्थित थे।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 17 फरवरी 2019 से 23 फरवरी 2019

मनोयुजा धी तथा पार्थिव और दिव्य सम्पत्ति

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

त्वं धियं मनोयुजं, सृजा वृष्टिं न तन्यतुः।
त्वं वसूनि पार्थिवा, दिव्या च सोम पुष्यसि।।

ऋग् ९.१००.३

ऋषिः रेभसूनू काश्यपौ। देवता पवमानः सोमः । छन्दः अनुष्टुप्।

● **(सोम)** हे सोम परमेश्वर!, **(त्वं)** तू, **(मनोयुजं)** मन से संयुक्त, **(धियं)** बुद्धि और क्रिया को, **(सृज)** उत्पन्न कर, **(तन्यतुः)** विद्युत्, **(वृष्टिं न)** जैसे वर्षा को उत्पन्न करती है, **(त्वं)** तू, **(पार्थिवा)** पार्थिव, **(दिव्या च)** और दिव्य, **(वसूनि)** ऐश्वर्यों को, **(पुष्यसि)** पुष्ट कर।

● हे सोम परमेश्वर! तुम्हारे अन्दर अपूर्व सर्जनात्मक शक्ति है, तुम सम्पूर्ण चराचर जगत् का ही सर्जन करनेवाले हो। अतः मेरी तुमसे प्रार्थना है कि तुम मेरे अन्दर मनःसंयुक्त 'धी' का सर्जन करो। वैदिक 'धी' में बुद्धि और क्रिया–शक्ति दोनों सम्मिलित हैं। मन का कार्य संकल्प और विचार करना, तथा बुद्धि का कार्य अध्यवसाय या निश्चय करना है। हमारी बुद्धि मनःसयुक्त हो, अर्थात् हम जो कुछ निश्चय करें वह मन से सोच विचार के उपरान्त ही करें, क्योंकि बिना विचारे सहसा किया गया निश्चय प्रायः भ्रान्त होता है। इसी प्रकार हमारी क्रिया भी मनःसंयुक्त हो, अर्थात् हम कर्म भी विचार–पूर्वक ही करें। जैसे विद्युत् मेघ से वृष्टि उत्पन्न करती है, वैसे ही तुम हमारे अन्दर मनःसंयुक्त 'धी' को उत्पन्न करो, 'धी' की वर्षा करो। उस 'धी' की वृष्टि में संस्नात होकर हम अपने अन्दर प्रबोध, चैतन्य, स्फूर्ति, प्रफुल्लता को अनुभव करें।

हे सोम प्रभु! तुम ऐश्वर्यशाली हो। तुम मुझे पार्थिव और दिव्य दोनों प्रकार की सम्पत्ति प्रदान करो। पार्थिव ऐश्वर्यों में हम तुमसे धन–धान्य, पुत्र, पशु, दुग्ध, घृत, वस्त्र, उत्तम गृह, भूमि, खेत, बाग–बगीचे आदि की समृद्धि चाहते हैं। वेद ने गृह–समृद्धि का चित्रांकन करते हुए कहा है कि हमारी चिरकाल तक स्थिर खड़ी रहनेवाली शाला में अश्व हों, गौएँ हों, सूनृता हो, अन्न हो, घृत हो, वत्स हों, कुमार हों, तरूण हों, दूध से भरे घड़े हों, दही के मटके हों। हमारे घरों में तुम ऐसा ही चित्र ला दो। हम समृद्धि–पूर्वक इस प्यारे लोक में हँसते–खेलते, नाचते–गाते दीर्घ जीवन पाते हुए आगे बढ़ें। साथ में तुम हमें दैवी सम्पत् भी प्रदान करो, जिसे भगवद्गीता में अभय, सत्व–संशुद्धि, ज्ञानयोग–व्यवस्थित, दान, दम, यज्ञ, स्वाध्याय, तप, आर्जव, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, अपैशुन, भूतदया, अलोलुपत्व, मार्दव, ह्री, अचापल्य, तेज, क्षमा, धृति, शौच, अद्रोह, अतिमानिता का अभाव, इन नामों से परिगणित किया गया है। इन पार्थिव और दिव्य उभयविध ऐश्वर्यों को हमें प्रदान करके तुम सदा इन्हें परिपुष्ट करते रहो, जिससे कभी ये क्षीण न हों, प्रत्युत अधिकाधिक बढ़ते ही जाएँ। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

यज्ञ प्रसाद

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पूज्य महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती जी महाराज ने अपने प्रवचन यज्ञ के सम्बन्ध में कहा यज्ञ–कर्म के प्रकाशक, ऋतुओं के निर्माता, समस्त जगत् के प्रकाशक, योग और क्षेम द्वारा सबके कल्याणकारक, रमणीय पदार्थ को अपनी शक्ति में बाँधनेवाले उस ज्ञानस्वरूप प्रभु की मैं स्तुति करता हूँ। यज्ञ से जो भाप उठता है, वह भी वायु और वृष्टि के जल को निर्दोष और सुगन्धित करके सब जगत् को सुखी करता है। इससे वह यज्ञ परोपकार के लिए ही होता है।"

जनता नाम जो मनुष्यों का समूह है, उसी के सुख के लिए यज्ञ होता है, और संस्कार किये द्रव्यों का होम करनेवाला जो विद्वान् मनुष्य है, वह भी आनन्द को प्राप्त होता है। यज्ञ करने से सबको उत्तम फल प्राप्त होता है, विशेष करके यज्ञकर्ता को, अन्यथा नहीं।"

अब आगे ....

यज्ञ न करने से मानव दोषी होता है

स्वामी जी मनुष्य के लिए यज्ञ को परम आवश्यक साधक बताते हैं। इसी प्रकरण में वे आगे कहते हैं –

"सबके उपकार करनेवाले यज्ञ को नहीं करने से मनुष्यों को दोष लगता है।... जब वायु और वृष्टि–जल को बिगाड़नेवाला सब दुर्गन्ध मनुष्यों के ही निमित्त उत्पन्न होता है, तो उसका निवारण करना भी उनको ही योग्य है।

"जितने प्राणी देहधारी जगत् में हैं, उनमें से मनुष्य ही उत्तम है, इससे वही उपकार और अनुपकार को जानने के योग्य हैं। धर्म का अनुष्ठान और अधर्म का त्याग करने को भी वे ही योग्य होते हैं, अन्य नहीं। इससे सबके उपकार के लिए यज्ञ का अनुष्ठान भी उन्हीं को करना उचित है।"

प्रतिदिन यज्ञ न करने से मनुष्य किस प्रकार पथभ्रष्ट हो जाता है, यह एक छोटी–सी गाथा से स्पष्ट हो जाता है –

एक थे सज्जन जीवनराम। वे सेठ ज्योतिस्वरूप के पड़ोस में रहते थे – एक झोपड़े में। उन्हें पता लगा कि सेठ के पास कई बढ़िया मकान हैं। उनके पास जाकर जीवनराम बोला – "अमुक मकान मुझे दे दीजिए। वहाँ निर्धन बच्चों के लिए एक पाठशाला आरम्भ करूँगा, एक निःशुल्क औषधालय चलाऊँगा और प्रतिदिन वहाँ सत्संग होगा जिसमें आध्यात्मिक उपदेश–कथाएँ होंगी और प्रतिदिन यज्ञ होगा। जो भी किराया आप कहेंगे, मैं दे दूँगा।"

ज्योतिस्वरूप बोले – "तुम तो बहुत अच्छे व्यक्ति हो। इतने श्रेष्ठ काम तुम मेरे मकान में करोगे, तो तुम्हें यह मकान बिना किराया दूँगा। बस शर्त यही है कि तुम मकान स्वच्छ रखो। ये सब उत्तम कार्य करो। मुझे किराये की आवश्यकता नहीं है।"

जीवनराम पहुँचे उस मकान में। वहाँ रहने लगे। प्रारम्भ में उन्होंने मकान को स्वच्छ रखा, पर कुछ दिन बाद ही, जीवनराम के कुछ जुआरी मित्र आ गए। पहले ताश शुरू हुई, फिर जुआ खेला जाने लगा। प्रतिदिन जुआ होता। अब शराब भी उड़ने लगी। धीरे–धीरे वह मकान डाकुओं का अड्डा बन गया। हर प्रकार के पाप वहाँ होने लगे। किसी ने ज्योतिस्वरूप से शिकायत की – "सेठ जी! आपने जो मकान यज्ञ और सत्संग के लिए दिया था, वह तो डाकुओं का अड्डा बन गया है।"

ज्योतिस्वरूप बोले – "क्या सचमुच ऐसी बात है?"

शिकायत करने वाले ने कहा – "हाँ जी! मैं अपनी आँखों से देखकर आया हूँ।"

ज्योतिस्वरूप ने अपने मुनीम को बुलाया; कहा – "जीवनराम से कहो कि मकान खाली कर दे। हमने ऐसे पाप–कर्मों के लिए मकान नहीं दिया था।"

छोटे मुनीम जीवनराम के पास पहुँचे। जीवनराम ने कुछ अनुनय–विनय किया। मुनीम साहब के हाथ कुछ गर्म कर दिये। उन्होंने मालिक के पास जाकर रिपोर्ट दे दी – "सब ठीक है। किसी ने मिथ्या शिकायत कर दी थी।"

कुछ दिन बाद सेठ के पास पुनः शिकायत पहुँची। इस बार उन्होंने बड़े मुनीम को भेजा। जीवनराम ने बड़े मुनीम की भी खुशामद–मिन्नत की। उसके पाँव पड़ा। प्रतिज्ञा की कि वह अपना सुधार करेगा। बड़े मुनीम ने मालिक को सारी रिपोर्ट दे दी। ज्योतिस्वरूप बोले – "अपराध तो भारी है पर यदि वह सुधरने को तैयार है, तो उसे कुछ समय देना चाहिए।"

समय बीत गया। फिर शिकायत आई कि जीवनराम के लक्षण पहले से भी अधिक बुरे हो रहे हैं। अब सेठ ने अपने लड़के को भेजा। जीवनराम ने उसे भी धोखा देने का प्रयत्न किया, पर वह धोखे में नहीं आया। मालिक ने वकील द्वारा नोटिस दिला दिया – "मकान खाली करो।" जीवन ने नोटिस

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

कर्मफल व्यवस्था

● भद्रसेन

हमारी जितनी भी जन्म, पुनर्जन्म आदि की भावनायें हैं। उन सब का मूल–आधार कर्मफल व्यवस्था ही है। जैसे कि –

1. कर्मों के कर्ता के रूप में जीव, क्योंकि कर्ता के बिना कोई कर्म नहीं हो सकता। अतः चेतन, नित्य कर्ता का मानना आवश्यक हो जाता है। तभी जन्म–जन्मान्तर की परम्परा प्रवाहमान रह सकती है।

2. कर्म अपना फल स्वयं देने में अक्षम है। क्योंकि फल देने के लिए कर्म के स्थल, समय, सीमा, साधन, सहायक, प्रभाव, भावना आदि का ज्ञान होना आवश्यक है। यह सब सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी, न्यायकारी व्यवस्थापक के बिना कठिन है। अतः कर्मफल दाता के रूप में ईश्वर की सत्ता स्वीकारना अनिवार्य है।

3. कर्म करने के लिए क्षेत्र और उसके फल को प्राप्त करने के लिए जहाँ जगत चाहिए, वहाँ कार्यों के कर्ता को सुकर्मों की ओर प्रवृत्त करने के लिए ज्ञान/धर्म का पूर्ण रूप भी अपेक्षित हो जाता है।

तभी तो जनता में किसी प्रकार की प्राप्ति पर होने वाली चर्चा में कर्म, भाग्य, विधि जैसे शब्द जहाँ चर्चित होते हैं, वहाँ सारे शास्त्र यथा प्रसंग ऐसे तत्त्वों पर विस्तृत प्रकाश डालते हैं।

कर्म – कर्मफल व्यवस्था के स्वारस्य के बोध के लिए हमारा सबसे पहले कर्म शब्द पर ध्यान केन्द्रित होता है। इससे कर्म शब्द का अर्थ, परिभाषा, प्रक्रिया, प्रयोजन, कर्मकर्ता, उसके सहायक, प्रेरकतत्त्व तथा कर्म के भेद, साधन (शरीर–इन्द्रिय–मन), दिशा, काल आदि सामने आते हैं। ये सब कर्म से जुड़े होने से विचार्य हो जाते हैं।

कर्म शब्द 'कृ' धातु से करने के अर्थ में मनिन प्रत्यय से बनता है। अतः इसका सामान्य अर्थ है– जो किया जाए। वैशेषिक दर्शन में गति को ही दिशा भेद से पाँच प्रकार के उत्क्षेपण आदि रूप में माना है। चर्चित प्रसंग में शुभ–अशुभ ये दो मुख्य भेद हैं। जो कि कर्ता की भावना और परिणाम पर भी निर्भर हैं। पाणिनि के '**कर्तुरीप्सितमं** कर्म (1,4,49) से कर्ता जिसको सबसे अधिक चाहता है– वह कर्म है। इससे कर्ता जहाँ स्वतन्त्र होने से नित्य, चेतन सिद्ध होता है, वहाँ वह कर्म का उत्तरदाता और फल का भोक्ता भी स्वतः सिद्ध हो जाता है। हमारे चारों ओर अनेक व्यक्ति स्वार्थ, लोभ, अहंकारवश स्पष्ट रूप से शुभ–अशुभ कर्म कर रहे हैं। पर वे केवल अच्छा ही फल प्राप्त करना चाहते हैं। कर्ता कर्म करने में स्वतन्त्र है। अतएव मनुस्मृति (2, 3–4) में सभी प्रकार के कर्म के मूल में संकल्प, इच्छा को माना है। जो चेतन कर्ता पर निर्भर है। आत्मा कुछ कर्म केवल मन से, कुछ मन–इन्द्रियों से और कुछ इन तीनों से करता है। अतः मन, इन्द्रिय, शरीर से कर्म का सम्बन्ध स्वतः सिद्ध हो जाता है। इसीलिए तदनुरूप कर्मों का फल इन तीनों से जुड़ता है। हाँ, व्यक्ति कभी कोई कर्म अकेले करता है और कभी किसी/किन्हीं के साथ मिल कर करता है। गीता (18, 13–14, 18) में अधिष्ठान, कर्ता, कारण चेष्ठा और देव ये पाँच कर्म के कारण कहे हैं। कर्म किये जाते समय क्रियमाण की स्थिति में और फिर पूर्ण होने पर संचित कोटी में और फिर अन्त में जब फल मिलना प्रारम्भ होता है, तो प्रारब्ध श्रेणी में आ जाता है।

फल– कर्मफलव्यवस्था शीर्षक का दूसरा शब्द है– फल, आज तक जिसने भी जो भी फल प्राप्त किया है, वह कर्म से ही किया है, हाँ, वह 'स्व' या 'पर' का कर्म हो सकता है। अतः कर्म तथा फल में पूर्व–अपर सम्बन्ध है। कर्म और फल स्थूल, सूक्ष्म भेद युक्त भी होते हैं।

फल शब्द विशेष रूप से बागवानी, खेती की प्रक्रिया से प्राप्य रूप का स्मरण कराता है। जो कि भूमि की सज्जा, बीज, उसका वपन, सिंचन, सम्भाल, पुष्प–फल–आगमन और परिपाक तक का प्रकरण सामने ला देता है। इसीलिए हमारी भाषाओं में कृषि प्रक्रिया के आधार पर अनेक कथन मिलते हैं। अतः कर्मफल तथा कृषि में पर्याप्त समानता है।

फल शब्द चर्चित प्रसंग में अनेक प्रकार, की प्राप्तियों का वाचक है। कभी भौतिक वस्तुओं की उपलब्धि के रूप में, तो कभी यश, सुख–दुःख अनुभव और आयु आदि के रूप में सामने आता है।

अधिकतम फल हमें जहाँ अपने–अपने कर्मों के परिपाक के रूप में स्पष्टतया प्राप्त होते हैं, वहाँ कुछ फल सामाजिकता के कारण दूसरों के सहयोग से परोपकार या बदले के रूप में भी मिलते हैं। यथा परिवार में मिलने वाला सहयोग सर्वतः स्पष्ट है। संसार में दो तरह की क्रियायें देखने में आती हैं। जैसे कि भोजनालय या खाने–पीने की दुकानों में एक पाचक वर्ग जो कर्म करने वाले के रूप में होता है और दूसरा वर्ग भोक्ता के रूप में कर्म करने वालों के तैयार पकवानों का आनन्द लेता है। ऐसे ही यात्रा के क्षेत्र में वाहनों के चालक और यात्रा करने वाले यात्री। यहाँ सर्वत्र भोक्तृत्व कर्तृत्व के पश्चात ही प्रकट होता है। यह ठीक है, कि ऐसे स्थलों में पाचक, कृषक, चालक आदि को उन–उन के कर्मों का फल वेतन, धन रूप में प्राप्त होता है। हाँ, इन सब में कर्म तथा फल में परस्पर अनिवार्य सम्बन्ध है।

फल प्राप्ति का समय – हम जो कर्म करते हैं, उनमें से कुछ का फल साथ–साथ मिलते हुए देखते हैं। जैसे कि रसोई या हलवाई, आदि के यहाँ। वे–वे कर्म जब–जब किए जाते हैं, तब पकवान सामने आते हैं और फिर खाने पर उनसे तृप्ति, सन्तोष आदि प्रकट होते हैं। कर्म अनेक प्रकार के हैं, कुछ कर्म अल्प काल में पूर्ण होते हैं और कुछ औरों से अधिक समय लेते हैं। जैसे कि हम कृषि में देखते हैं, कि कृषि कर्म करने पर कुछ फसलें दो मास बाद, कुछ छः या नौ मास उपरान्त सामने आती हैं। बागवानी में वर्षों का समय लग जाता है। ऐसे ही पशुपालन में पशु के प्रसूता होने पर पालन का फल साथ–साथ सामने आता है। प्रसूता न होने पर प्रसव के अनुरूप फल फलित होता है। अतएव मनुस्मृति (4,172) आदि ने गौ शब्द का संकेत करके फल को समझाया है। यहाँ गौ शब्द भूमि तथा पशु विशेष का बोधक है।

संसारी कर्म इस दृष्टि से स्पष्ट हैं। इनके आधार पर जब हम यज्ञ, दान, परोपकार जैसे धार्मिक कर्मों पर विचार करते हैं। तो अधिकतर का इस जन्म में फल सामने नहीं आता। ऐसे कर्मों के फल को समझाने के लिए मीमांसा आदि शास्त्रों ने अपूर्व, अदृष्ट, भाग्य आदि शब्द का प्रयोग किया है। अपूर्व का यहाँ अर्थ है, कि यज्ञादि कर्म करने से पूर्व न हो पश्चात् हो। यह अपूर्व तब तक संस्कार रूप में रहता है, जब तक उसका फल प्रकट नहीं होता। अदृष्ट का अभिप्राय है, कि जो भौतिक रूप में दिखाई न दे, अदृश्य हो।

इस प्रकार के अन्तर को ध्यान में रख कर के ही योग दर्शन में विदेह, प्रकृतिलय की समाधि की सिद्धि को पूर्वजन्म के कारण माना (1, 19) है। अन्य श्रद्धा, वीर्य (क्षमता), स्मृति, साधना जैसे सामयिक पुरुषार्थ से समाधि सिद्ध करते है (1,20)। इस विवेचन से स्पष्ट होता है, कि फल प्राप्ति दो प्रकार की है। कुछ कर्मों का फल इसी जन्म में सामने आ जाता है। कुछ कर्म ऐसे भी होते हैं। जिन का फल दूसरे जन्म में सामने आता है। हमारा जन्म अर्थात उस समय प्राप्त होने वाले शरीर–इन्द्रिय–अन्तःकरण आदि पिछले जन्मों के कर्मों के आधार पर प्राप्त होते हैं। इसीलिए योग (2,13) में आया है, कि कर्मरूपी मूल (जड़, करण) के होने पर ही जाति, आयु और भोग रूपी फल होते हैं। यहाँ जाति शब्द विविध योनियों के शरीरों का ही वाचक है। वैशेषिक दर्शन (1,2,4) में निर्दिष्ट सामान्य (समता, समानता, सदृशता मूलक) लक्षण शरीर पर ही घटता है। ऐसे ही न्यायदर्शन में आया जाति का लक्षण (2,2,68) शरीर पर ही चरितार्थ होता है। यतोहि अपने समान को जन्म देना या जन्म की समान प्रक्रिया का होना शरीर से सम्बद्ध है। यहाँ शरीर शब्द जन्म समय प्रकट होने वाले (तन–इन्द्रिय–अन्तः करण से आत्म के) सम्बन्ध का वाचक है। आयु–उस–उस प्राणी के जन्म समय प्राप्त शरीरादि के अनुरूप ही होती है। यहाँ सूत्र में आयु जाति के बाद है, जो इनके पूर्व–अपर सम्बन्ध का संकेतक है। जीव विज्ञान के सारे विशेषज्ञ इस बात में सहमत हैं, कि हर प्राणी के शरीर की ही अपनी–अपनी आयु है। जैसे कि गाय, भैंस, घोड़े आदि की सामान्य आयु मानी जाती है। तभी तो वेद में अनेकत्र शत वर्ष की चर्चा मनुष्य की दृष्टि से है। सूत्र में तीसरी वस्तु भोग है। इसका भाव यही है, कि उस–उस शरीर से सम्बद्ध भोग अर्थात् खान–पान रहन–सहन और और उनसे जुड़ी वस्तुओं के बर्तने से होने वाला सुख–दुःख संसारी भोग सम्बन्धियों, वस्तुओं के माध्यम से होते हैं। न्याय दर्शन (4,1,51;54) में कुछ नाम दर्शा कर चर्चा को स्पष्ट किया है। योग (2,14) के दूसरे सूत्र में भेद सहित भोग का वर्णन हैं।

फल में विषमता – भौतिक–अभौतिक रूप में हम सब को जो कुछ भी फल प्राप्त होता है। उसमें स्पष्ट रूप से विषमता सर्वत्र दिखाई देती है। जैसे कि खेल के पुरस्कारों में, परीक्षा के परिणाम में, कार्यालय और कारखाने आदि में मिलने वाले वेतन में तथा न्यायलय के निर्णय में प्रायः विषमता देखी जाती है। सोचने पर इस विषमता का अभ्यास, दृढ़ संकल्प, उचित सुविधा और प्रशिक्षण का अन्तर कार्यकौशल, कार्यकाल, झगड़े का अपना भाग आदि सामयिक कारण सामने आते हैं। निःसन्देह कई बार कहीं पक्षपातपूर्ण स्पष्ट रूप से अन्याय प्राप्त होता है। वह स्पष्ट रूप में अन्याय है, अतः उस पर कुछ कहने की जरूरत ही नहीं है।

चमत्कार और कर्मफल – आस्तिक भावना की अधिकता के कारण कुछ फल प्राप्ति को ईश्वर की इच्छा पर निर्भर मानते हैं। तभी तो हमारे यहाँ वरदान, आशीर्वाद, चमत्कार से सम्बद्ध कुछ प्राप्तियों की कहानियाँ कही जाती हैं। इस सम्बन्ध में पहली बात तो यह है, कि ऐसी बातें एक–आध के साथ ही घटती हैं। दूसरी बात यह है, कि यह चर्चा बातों–बातों में ही अधिक चलती है। व्यावहारिक रूप से ऐसा सबके साथ नहीं घटता। पुनरपि जो भी कहानियाँ कही

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

सृष्टि के उपादान-कारण मूल-प्रकृति में रूप, आकृति आदि गुण होते हैं?

● भावेश मेरजा

जिन वस्तुओं को हम देखते हैं वे सब वस्तुएं प्रकृति (Primordial matter, the material cause of universe) से बनी हुई होती हैं। वैदिक दर्शन (Philosophy) में प्रकृति को ही सृष्टि का उपादान कारण (Material cause) माना गया है। इस प्रकृति रूपी कारण पदार्थ (cause) से उत्पन्न हुए कार्य पदार्थों (effects) में से कुछ को हम आंखों से देख सकते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि कारण पदार्थ प्रकृति में भी रूप, रंग, आकृति आदि गुण होने चाहिए। क्योंकि कारण में ये गुण न होते तो कार्य में कहाँ से आते?

24 सितम्बर 1877 को मौलवी अहमद हसन से जालन्धर में हुए एक शास्त्रार्थ में आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपना मन्तव्य प्रकट करते हुए कहा था –

"आकृति दो प्रकार की होती हैं – एक ज्ञान से ग्रहण होती है और एक चक्षु आदि इन्द्रियों से। कारण में ही आकृति की स्थिति है, परन्तु वह इन्द्रियों द्वारा ग्रहण नहीं होती क्योंकि जो सूक्ष्म वस्तु होती है जब वह स्वयं ही नहीं दिखाई देती तो उसका आकार क्या दिखाई देगा? और जो कारण में आकृति न हो तो कार्य में नहीं आ सकती, क्योंकि जो कारण के गुण हैं वही कार्य में आते हैं। जैसे एक तिल के दाने में तेल होता है, वह करोड़ों दानों में भी बराबर होता है। लोहे के अणु में तेल नहीं होता तो मन भर में भी नहीं होता। जो वस्तु नित्य है उसके गुण भी नित्य हैं। कारण का होना न होना नहीं कहा जाता, वह तो सनातन है और जो वस्तु सनातन है उसकी आकृति भी कारणावस्था में सनातन है । आकृति बिना द्रव्य के पृथक् नहीं रह सकती। वह आकृति उसी द्रव्य की है इससे सिद्ध है कि कारण सनातन है ।" (द्रष्टव्य – दयानन्द शास्त्रार्थ संग्रह)

8-17 टाउनशिप, पो. नर्मदानगर,
जि. भरूच (गुजरात) – 392015,
मो. 9879528247

☞ पृष्ठ 03 का शेष

कर्मफल व्यवस्था

जाती हैं। उन में भी उस-उस की तपस्या, साधना आदि की चर्चा भी अवश्यक होती है। अतः कर्मफल दाता ईश्वर कर्म करने पर ही कृपा करता है, यह बात स्वतः सिद्ध हो जाती है। अन्यथा **अंकृताभ्यागम** (बिना किये प्राप्ति) तथा करने पर भी अप्राप्ति रूपी पक्षपात का दोष आ जाता है। ईश्वर सब का एक सा पिता है, सब की आत्मा एक जैसी है और सभी में प्राकृतिक तत्त्व एक से हैं अर्थात् सभी रचनाकार की रचनायें हैं। न्यायदर्शन (4,1,19-21) में भी इस चर्चा को अपना विवेच्य बनाया है। वहाँ सारांश यही ही है, कि एकमात्र ईश्वर ही फलप्राप्ति का कारण नहीं है।

कर्मफल व्यवस्था को मानने वाले सारे के सारे आस्तिक ईश्वर को न्यायकारी, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी मानते हैं। अतः ऐसे न्यायकारी द्वारा जो विषमता होती है। उसका कोई न कोई कारण अवश्य ही होता है। जिस विषमता का सोचने पर भी सामयिक, कारण स्पष्ट रूप में सामने नहीं आता, वहाँ पूर्व कर्मों के कारण मानना सरल रहता है। तभी तो महर्षि वाल्मीकि ने रामायण के अयोध्या काण्ड (22,24) में लिखा है–

आरम्भ हुए कार्य को बीच में रोक कर संकल्प और सामयिक क्रिया कलाप के बिना जो फल अकसमात ही मिलता है। उसी को ही दैव, भाग्य कहना चाहिए।

दैव आदि शब्द– यह प्रसंग जहाँ-कहीं भी चर्चित होता है, तो वहाँ दैव, भाग्य, विधि, कर्म आदि शब्दों की चर्चा अवश्य होती है। दैव– देव से दैव शब्द बनता है। जिसका भाव है– देव द्वारा किया गया या प्राप्त। विधि-विधान, नियम, उसके कर्ता और ढंग के लिए आता है। अतः इसका तात्पर्य हुआ, कि ऐसा देव है, जिसके विधि-विधान के अनुसार जो जैसा कर्म करता है। वह उसके अनुरूप अपने कर्मों का फल प्राप्त करता है। भाग्य-शब्द भाग से बनता है। भाग का अर्थ है-अंश, हिस्सा। अतः भाग्य का अर्थ हुआ हिस्से का अर्थात् बांटने पर मिलने वाला अंश किसी न किसी आधार पर प्राप्त होता है। जैसे कि कुछ मिलकर किसी कार्य को करते हैं। उस कारोबार से जो लाभ होता है। उसके समझौते के अनुरूप भाग बंटते है। ऐस ही भाईयों में एक पिता की सन्तान होने से भाग होते हैं। अतः यह प्राप्ति कर्म, जन्म, शिष्य आदि के आधार पर होती है। लेख-लिखे के आधार पर प्रयुक्त होता है। ऐसा विश्वास है, कि लिखने वाले ने (कर्म के अनुरूप) जो लिखा है।

दैव, भाग्य आदि शब्दों का सम्बन्ध पूर्व जन्म के कर्मों से ही अधिकतर होता है। इस प्रसंग के दूसरे शब्द हैं– पुरुषकार, पुरुषार्थ, परिश्रम आदि। इन शब्दों का सम्बन्ध इस जन्म, समय में किए जाने वाले श्रम से रहता है। चरक, हितोपदेश आदि में ऐसी विवेचना अनेकत्र आई है। महाभारत (13,6,7-8) में पुरुषार्थ की उपमा क्षेत्र से और दैव, भाग्य की बीज से दी है। जैसे कि खेती, बागवानी में क्षेत्र भूमि और बीज दोनों का सम्बन्ध, उपयोगिता स्पष्ट है। खेत की तैयारी प्रत्यक्ष, तात्कालिक यत्न से सिद्ध होती है। पर बीज पहली फसल, उपज से सम्बन्ध अर्थात् पूर्वतः परिपक्व होता है। ऐसे ही कर्मफल व्यवस्था में पुरुषार्थ खेत (की तैयारी) के समान और दैव बीज के तुल्य कहे जा सकते हैं। जैसे बीज बिना तैयार खेत अधूरा है। ऐसे ही परिश्रम भी अधूरा है। इन दोनों के मेल से ही फल सामने आता है। इन दोनों के स्वरूप को समझाने के लिए याज्ञवल्क्य स्मृति (1,35) में रथ के पहियों से इनकी उपमा दी है। हमारे जन्म में दैव की प्रधानता रहती है। इसके पश्चात् धीरे-धीरे पुरुषार्थ की प्रबलता होती जाती है। इसीलिए हमें समझदार, स्वावलम्बी हो जाने पर दैव, भाग्य की चिन्ता न करते हुए अपनी ओर से पुरुषार्थ में लगे रहना चाहिए। इस समय भाग्य हमारे हाथ में नहीं है केवल पुरुषकार ही स्ववश में होता है। अतः अपने बस की बात को अपनाते हुए धैर्य पूर्वक परिश्रम करना चाहिए।

व्यवस्था– अभी तक की गई चर्चा में कर्म और फल पर विचार किया गया है। आइए अब व्यवस्था शब्द पर भी कुछ विचार कर लें। व्यवस्था शब्द 'वि' और अवस्था का मेल है। यहाँ अवस्था शब्द स्थिति, अस्थित्व का बोधक है और इसका पूर्ववर्ती 'वि' उपसर्ग है। जो कि विशेष, व्यवस्थित, सुनिश्चित, क्रमबद्ध आदि भाव को अभिव्यक्त करता है। जैसे कि विज्ञान का 'वि' उपसर्ग कृषि विज्ञान में अधिक स्पष्ट, प्रत्यक्ष है।

भारतीय परम्परा के अनुसार कर्मफल व्यवस्था का व्यवस्था शब्द यह दर्शाता है, कि प्रत्येक कर्म का कोई न कोई फल अवश्य होता है। जिसका जैसा कर्म होता है, परिपाक पर कर्ता ही उसके फल को प्राप्त करता है। न तो उसके स्थान पर दूसरा कोई उस फल को प्राप्त करता है और नही कर्ता किसी प्रकार से उस फल से बच सकता है। हाँ, दूसरे सहयोगी, प्रेरक, प्रयोज्य आदि होने से अपने अंश के अनुरूप भागीदार हो सकते हैं। अतः इस व्यवस्था पर विश्वास रखते हुए ऐसे ही कर्म करने चाहियें। जिनका फल भोगने के लिए बाद में तैयार हों। आज के भ्रष्टाचार का सबसे बड़ा कारण यही है कि भ्रष्ट कर्म करने वालों को कर्म फल व्यवस्था पर विश्वास पूरी तरह से नहीं है।

प्राचीन भारतीय शास्त्रों की यह दृढ़ धारणा है, कि कर्मफल व्यवस्था पूर्णतः अटल, अटूट है। क्योंकि यह ईश्वर द्वारा संचालित होती है। ईश्वर-सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी आदि गुणयुक्त है। ईश्वर के संसार रचना, पालना आदि कार्य जिस प्रकार पूर्णतः नियमबद्ध हैं। ठीक इसी प्रकार ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था भी सर्वथा सदा-सर्वत्र व्यवस्थाबद्ध, अटल, अटूट है। अतः सभी पर समान रूप से लागू होती है। यह रचना ईश्वर ने कर्मफल व्यवस्था के आधार पर रची है। अतः ब्रह्माण्ड की दृष्टि से ईश्वर का एकमात्र मुख्य रूप कर्मफल व्यवस्थापक का ही है। ईश्वर के रचनाकार, पालनहार, नियामक, संहारक रूप कर्मफल व्यवस्थापक की ही व्याख्या या अंग ही हैं। ईश्वर रचित संसार कर्मफल व्यवस्था का प्रतिफल, निदर्शन ही है। अतः इस कर्मफल व्यवस्था का पूर्ण ज्ञाता ईश्वर ही है। हम केवल शास्त्रों और अनुभवियों के आधार पर कुछ-कुछ सोच, समझ, अनुमान ही कर सकते हैं। हाँ, आश्चर्य तो यह है, कि इस व्यवस्था को अटल मानते हुए भी मन्नत मनाने के लिए अर्थात् उचित-अनुचित इच्छापूर्ति और गले की बला को टालने के लिए अर्थात् पापमुक्ति के लिए अनेक विविध प्रकार के दान-पुण्य करते हैं। मूर्तिपूजा का आज का व्यवहार इसका स्पष्ट प्रमाण है।

182 शालीमार नगर
होशियारपुर पंजाब
मो. 9464064398

यजुर्वेद में सामाजिक व्यवहार

● **शिवनारायण उपाध्याय**

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसका जन्म भी सामाजिक घटक परिवार में होता है। समाज में रहकर ही वह उठना–बैठना बोलना चलना सीखता तथा अपने जीवन का विकास करता है। समाज द्वारा ही उसकी शिक्षा दीक्षा तथा आजीविका का साधन उपलब्ध कराया जाता है। जीवन भर तो वह समाज से कुछ न कुछ प्राप्त करता ही रहता है परन्तु मृत्यु के उपरान्त उसके शरीर का अन्तिम क्रिया कर्म समाज के सहयोग से ही होता है। समाज से अलग रह कर कोई भी व्यक्ति अपना किसी भी प्रकार का विकास नहीं कर सकता है। माता–पिता उसको इस संसार में आने का केवल अवसर ही नहीं देते वरन् उसको पैरों पर खड़ा होकर चलना फिरना, बोलना, उसके शरीर और वस्त्रों की सफाई करना आदि भी उसे सीखाते हैं। घर परिवार में रहकर ही वह प्रारम्भिक ज्ञान भी प्राप्त करता है। वही आगे चलकर उसको शिक्षित भी करवाते हैं। इसलिए *माता–पिता की सेवा करना,* वृद्धावस्था में उन्हें किसी प्रकार से कष्ट न होने देना सन्तान का कर्तव्य बन जाता है। इसलिए यजुर्वेद में मनुष्यों से कहा गया है कि–

अत्र पितरो मादयध्वं यथाभागमावृषायध्यम्।
अमीमदन्त पितरो यथाभागमावृपायिषत।।

यजुर्वेद 2.31

भावार्थ– ईश्वर आज्ञा देता है कि मनुष्य लोग माता पिता आदि धार्मिक सज्जन विद्वानों के समीप आते हुये देखकर उनकी सेवा करें। उन्हें यथा योग्य बैठने के लिए आसन दें, उनके प्रिय पदार्थ उन्हें भेंट करें तथा उनसे उपदेश देने की प्रार्थना करें। उनके अच्छे से अच्छे काम करने की शिक्षा प्राप्त करे। इससे आगे चलकर वेद में कहा गया है–

ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम्।
स्वधा स्थ तर्पयत मे पितृन्।

यजु. 2.34

पदार्थ– हे पुत्रादिकों! तुम **(मे)** मेरे **(पितृन्)** पितरों को **(ऊर्जम्)** अनके प्रकार के उत्तम रस **(वहन्तीः)** सुख प्राप्त कराने वाले स्वादिष्ट जल **(अमृतम्)** सब रोगों को दूर करने वाले ओषधि मिष्ठादि पदार्थ **(पयः)** दूध **(घृतम्)** घी **(कीलालम्)** उत्तम रीति के पकाया गया उत्तम अन्न तथा **(परिस्रुतम्)** रस से चूते हुये पके फलों को देकर **(तर्पयत्)** तृप्त करो। इस प्रकार तुम उनकी सेवा करके विद्या को प्राप्त होकर **(स्वधा)** परधन का *त्याग करके अपने धन के सेवन करने वाले* **(स्थ)** होओ।

सन्तान माता–पिता के साथ कैसा बर्ताव करे इस विषय में फिर यजुर्वेद अध्याय 19 मंत्र संख्या 11 में कहा गया–

यदापिपेप मातरं पुत्रः प्रमुदितो धयन्।
एतत्तदग्ने अनृणो भवाम्यहतौ पितरौ मया।
सम्पृच स्थ सं मा भद्रेण पृङ्क्त विपृच स्थ वि मा पाप्मना पृङ्क्त।।

पदार्थ– हे **(अग्ने)** विद्वन्! **(यत्)** जो **(प्रमुदित)** अत्यन्त आनन्दित **(पुत्रः)** पुत्र दुग्ध को **(धयन्)** पीता हुआ **(मातरम्)** माता को **(आपिपेष)** सब ओर से पीड़ित करता है उस पुत्र से मैं **(अनृणः)** ऋणरहित **(भवामि)** होता हूँ जिससे मेरे **(पितरः)** माता–पिता **(अहतौ)** हनन रहित और **(मया)** मुझसे **(भद्रेण)** कल्याण के साथ वर्तमान हो। हे मनुष्यों! तुम **(संपृचः)** सत्य सम्बन्धी **(स्थ)** हो **(मा)** मुझको कल्याण के साथ **(सं पृङ्क्त)** संयुक्त करो और **(पाप्मना)** पाप से **(विपृचः)** पृथक् रहने वाले **(स्थ)** होओ। इसलिए **(मा)** मुझे भी इस पाप से **(विपृङ्क्त)** पृथक् कीजिये। **(तदेतत्)** परजन्म तथा इस जन्म के सुख को प्राप्त कीजिये।

मंत्र के भावार्थ में स्वामी दयानन्द सरस्वती लिखते हैं कि जैसे माता–पिता पुत्र का पालन करते हैं वैसे पुत्र को माता–पिता की सेवा करनी चाहिए। सब मनुष्यों को इस जगत् में यह ध्यान देना चाहिए कि हम माता–पिता का यथावत करके पितृ ऋण से मुक्त हों। *माता–पिता के बाद अगला स्थान गुरु का* होता है जो हमें सब प्रकार की उपयोगी शिक्षा देकर संसार में प्रतिष्ठित करता है। उस गुरु के प्रति हमारा व्यवहार कैसा हो, इस विषय में वेद कहता है–जो कभी अकस्मात् भ्रान्ति से किसी विद्वान् का अनादर कोई करे तो उसी समय क्षमा करावें। (यजु. 20.14 का भावार्थ) पुनः यजुर्वेद अध्याय 18 मंत्र संख्या 61 में कहा गया है। –

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते स७ सृजेथामयं च।
अस्मिन्त्सधस्थे आध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत।।

भावार्थ– जो चैतन्य और बुद्धिमान् विद्यार्थी हों उन्हें पढ़ाने वाले को अच्छी प्रकार पढ़ाना चाहिए। जो विद्या प्राप्ति की इच्छा से पढ़ाने वालों के अनुकूल आचरण करने वाले हों और जो अनुकूल पढ़ाने वाले हों वे परस्पर प्रीति से निरन्तर विद्याओं की वृद्धि करें और जो इन पढ़ने पढ़ाने वालों से पृथक् उत्तम विद्वान् हों वे इन विद्यार्थियों की सदा परीक्षा किया करें। यजुर्वेद अध्याय 19 मंत्र संख्या 67 में कहा गया है कि जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष विद्वान् अध्यापक और उपदेशक हैं उन सब को बुला अन्नादि से सदा सत्कार करते रहो। वेद मनुष्यों को व्रती बनाने के लिए प्ररित करने को कहता है। सबसे बड़ा व्रत सत्य को ग्रहण करना और असत्य को छोड़ देना है।

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि।।

यजु. 1.5

पदार्थ – **(व्रतपते)** व्रतों के स्वामी परमेश्वर! **(अग्ने)** तेजस्वी परमेश्वर। मैं **(व्रतम्)** व्रत **(चरिष्यामि)** लूंगा (तत्) उस व्रत के पालन में **(में)** मैं **(शकेयम्)** समर्थ होऊँ। **(तत्)** उस सत्यव्रत को आप **(राध्यताम्)** अच्छी प्रकार सिद्ध कीजिए। **(इदम्)** इस सत्य व्रत क आचरण में **(अहम्)** मैं **(अनृतात्)** झूंठ से अलग **(सत्यम्)** सत्य को **(उपैनि)** ग्रहण करूँगा।

आगे वेद में कहा गया है कि हम आपसी लेन देन में सत्य का ही व्यवहार करें–

देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नि त दधे।
निहारं च हरासि मे निहारं नि हराणि ते स्वाहा।

यजु. 3.50

पदार्थ– हे मित्र ! तुम **(स्वाहा)** जैसे सत्यवाणी हृदय से कहे वैसे **(मे)** मुझको यह वस्तु **(देहि)** दो या मैं **(ते)** तुझको यह वस्तु **(ददामि)** देऊँ तथा तू **(मे)** मेरी वस्तु **(निधेहि)** धारण कर। मैं **(ते)** तुम्हारी यह वस्तु **(निदधे)** धारण करता हूँ और तू **(मे)** मुझको **(निहारम्)** मूल्य से क्रय करने योग्य वस्तु को **(हरासि)** दे। मैं **(ते)** तुझको **(निहारम्)** पदार्थ का मूल्य **(निहरामि)** निश्चय करके देऊँ। **(स्वाहा)** ये सब व्यवहार सत्यवाणी से करें अन्यथा में व्यवहार सिद्ध नहीं होते हैं।

मनुष्य जैसा अपने लिए सुख, सम्पत्ति चाहते हैं वैसी ही अन्य लोगों के लिए भी चाहें। इस विषय पर वेद कहता है। –

मधुमतीर्न इषस्कृधि यत्ते सोमादाभ्यं नाम जागृवि तस्मै
ते सोम सोमाय स्वाहा
स्वाहोर्वन्तरिक्षमन्वेमि।।

यजु. 7.2

मंत्र के भावार्थ में स्वामी दयानन्द सरस्वती लिखते हैं कि मनुष्य जैसे अपने सुख के लिए अन्न जलादि पदार्थों का सम्पादन करे वैसे ही औरों के लिए भी दिया करें और जैसे कोई मनुष्य अपनी प्रशंसा करे वैसे ही औरों की प्रशंसा आप भी किया करें। जैसे विद्वान् लोग अच्छे गुण वाले होते हैं वैसे आप भी हों। यजुर्वेद में अतिथि सम्मान को भी बड़ा महत्त्व दिया गया है।

येषामध्येति प्रवसन् येषु सौमनसो बहुः।
गृहानुपह्वयामहे ते तो जानन्तु जानतः।।

यजु. 3.42

पदार्थ– **(प्रवसन्)** प्रवास करता हुआ अतिथि **(येषाम्)** जिन गृहस्थों का **(अध्येति)** स्मरण करता हुआ अथवा **(येषुः)** जिन गृहस्थों में **(बहुः)** अधिक **(सोमनसः)** प्रीतिभाव है उन **(गृहान्)** गृहस्थों को हम अतिथि लोग **(उपह्वयामहे)** नित्य प्रति प्रशंसा करते हैं। जो प्रीति रखने वाले गृहस्थ लोग हैं **(ते)** वे **(जानतः)** जानते हुए धार्मिक **(नः)** हम अतिथि लोगों को **(जानन्तु)** यथावत् जाने।

मनुष्यों को नीच लोगों की सङ्गति नहीं करनी चाहिए। इस विषय में यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र संख्या 42 के भावार्थ में स्वामी दयानन्द लिखते हैं कि मनुष्यों को चाहिए कि नीच व्यवहार और नीच पुरुषों को छोड़ के अच्छे अच्छे व्यवहार तथा उत्तम विद्वानों को नित्य चाहें और उत्तमों से उत्तम तथा न्यूनों से न्यून शिक्षा का ग्रहण करें। यज्ञ और यज्ञ के पदार्थो का तिरस्कार कभी न करें तथा सबको चाहिए कि एक दूसरे के मेल से सुखी हों।

मनुष्यों को आजीविका के लिए धन प्राप्ति हेतु सदैव पुरुषार्थ करते रहें और आजीविका का अर्जन धर्म मार्ग से ही करें। इस विषय में यजुर्वेद अध्याय 17 मंत्र संख्या 56 के भावार्थ में स्वामी दयानन्द सरस्वती लिखते हैं कि मनुष्यों को चाहिए कि धन प्राप्ति के लिए सदैव उद्योग करें। जैसे विद्वान् धन प्राप्ति के लिए प्रयत्न करें वैसे उनके अनुकूल अन्य मनुष्यों को भी यत्न करना चाहिए।

धन को व्यर्थव्यय न करके सुपात्रों को दान भी देना चाहिए।

श्रीणामुदारो धरूणो रयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः
वसुः सूनुः सहसो अप्सु राजा वि भात्यग्र उपसोमिधानः।।

यजु. 12.22

मंत्र के भावार्थ में स्वामी दयानन्द सरस्वती लिखते हैं– कि सब मनुष्यों को उचित है कि सुपात्रों को दान देने धन का व्यर्थ खर्च न करने, सबको विद्या बुद्धि देने, जिसने ब्रह्मचर्याश्रम सेवन किया हो, अपने इन्द्रिय जिसके वश में हों, योग के यम आदि आठ अङ्गों के सेवन से प्रकाशमान सूर्य के समान अच्छे गुण कर्म और स्वभावों से सुशोभित और पिता के समान अच्छे प्रजाओं का पालन करने हारा पुरुष हो। उसको राज्य करने के लिए स्थापित करें।

मनुष्यों को आलसी न बन कर पुरुषार्थी बनना चाहिए।

अक्रन् कर्म कर्मकृतः सह वाचा मयोभुवा।
देवेभ्यः कर्म कृत्वास्तं प्रेत सचाभुवः।।

यजु. 3.47

मंत्र में कहा गया है कि सत्यप्रिय मंगल के कराने वाली वेदवाणी के साथ परस्पर संगी होकर कर्मो को करते हुये जो अपने अभीष्ट कर्म को करते हैं वे विद्वान् सुखों के लिए करने योग्य कर्म का अनुष्ठान करने पूर्ण सुख युक्त घर को प्राप्त होते हैं।

मनुष्यों को सभी के लिए परमेश्वर से सुख देने की प्रार्थना करनी चाहिए इस प्रकार का वर्णन यजु. 3.26 में आया है। पति–पत्नी भी आपस में मिल कर रहें और कभी भी एक दूसरे का अनिष्ट चिन्तन न करें।

तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपो जनयथा च नः।।

यजुर्वेद 11.52

भावार्थ– जिस पुरुष की जो स्त्री व जिस स्त्री का जो पुरुष हो वे आपस में किसी का अनिष्ट चिन्तन कदापि न करें। ऐसे ही सुख और सन्तानों से शोभायमान हो के धर्म से घर के कार्य करें।

मनुष्यों को अपने मित्रों का सदैव रक्षक बन कर रहना चाहिए।

अभी पु णः सखीनामविता जरितृणाम्
शतं भवास्पूतये।।

यजु. 27.41

भावार्थ– जो मनुष्य अपने मित्रों के रक्षक, असंख्य प्रकार का सुख देने वाले अनाथों की रक्षा में प्रयत्न करते हैं वे असंख्य धन को प्राप्त होते हैं।

अब विषय को विस्तार न देकर यही विराम देते हैं। इति।

73 शास्त्री नगर, दादाबाड़ी
कोटा (राजस्थान) – 324009

गतांक से आगे ...

सरस्वती वंदना

● अशोक जौहरी

मातृभूमि इस मंत्र का अन्तिम मंत्राश है हमारी मातृभूमि। हमें अपनी मातृभूमि पर गर्व होना चाहिए। यह सभी जीवों का आश्रय स्थल है। इसी पृथ्वी के गर्भ से वनस्पतियाँ उगती हैं। हम धरती का सीना चीर कर अन्न व अन्य औषधियाँ उपजाते हैं। यही हमारा भरण पोषण करती है। इतना ही नहीं इसके गर्भ में अपार ऐश्वर्य छिपा हुआ है। हमें सभी प्रकार के खनिज पदार्थ जैसे कोयला, पेट्रोलियम, नेचुरल गैस व हीरे–पन्ने, मणि आदि अन्य सामग्री भी प्रदान करती है। जिसमें अपनी सभी सुख–सुविधा के साधन जोड़ते हैं। धन्य है धरा की सहनशक्ति हमें ईश्वर के तथा धरती के कण–कण का कृतज्ञ होना चाहिए। हमें इसकी रक्षा के लिए मर–मिटना चाहिए। अपने लहू की कुर्बानी देनी पड़े तो हमें सहर्ष स्वीकार हो।

वेद हमें संगठित रहने का उपदेश देता है।

संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर।।
सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।।
समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वः हविषा जुहोमि।।
समानी वः आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।

ऋ. 10/191/34

अर्थ – समान बुद्धि वाले, समान विचारों वाले राष्ट्रवादी ही राष्ट्र का हित कर सकते हैं। राष्ट्र विरोधी ताकतों को अपने यथा बल व पौषार्थ से पराजित करें। राष्ट्र को समृद्धशाली व सम्पन्न बनाने में अपना योगदान दें।

इसी प्रकार वेद हमें संगठित रहने का आदेश देता है। हम सब द्विज ब्रह्म तेज धारी होवें। क्षत्रिय स्वधर्म का पालन करते हुए शत्रुओं का नाश करने में सक्षम हों। देश की सुरक्षा प्रण–प्राण से करने वाले हों। पशुधन बलशाली हो। गौवे दुधारू व बल वीर्य बढ़ाने वाली हो। नारियाँ विदुषी हों। राष्ट्र की धुरा हों। पुत्र व पुत्रियाँ सुभग, सुयश व कीर्ती हों।

छः ऋतुएँ हों। इच्छानुसार वर्षा सुख देने वाली हो, धरती पर पर्याप्त फल–फूल, अन्न व वनस्पति का भंडार हो। औषधियाँ सारी अमोध होवें। हमारी स्वतंत्रता योगक्षेम कारी होवें।

इसी प्रकार हमारे राष्ट्रकवियों ने मातृ वन्दना की भूरि–भूरि प्रशंसा की है।

शिला हिरण्य वक्षे प्रथित्यों अकरं नमः।।

इन सब से प्रेरित हमारे स्वतंत्रता सेनानी सुभाषचन्द्र बोस, लाल, बाल व पाल व कितने ही आदिवासियों ने भी स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गाँधी का बढ़–चढ़कर साथ दिया। वे सत्ता के लोलुप नहीं थे। उनका एक मात्र ध्येय भारत को स्वतंत्र करना था, उन्होंने फिर भी अंग्रेज़ों की कठोर यातनाएँ झेली। उनके उत्साह में कोई परिवर्तन न आया। सहर्ष अपने प्राणों की बाजी लगा दी। इसमें हमारे आर्य समाजियों का भी पूरा योगदान था। वह किसी से कम न थे। हमें अपने गौरवशाली इतिहास को कदापि भूलना नहीं चाहिए।

इस प्रकार इन मंत्रों से हमें शिक्षा मिलती है। इन तीन देवियों की घर–घर पूजा हो। उपरोक्त बातों को हृदय से स्वीकार करने में ही हमारी भलाई है।

हमें बड़े खेद के साथ कहना पड़ता है। आज के युग में लोग भारत भूमि को माँ के रूप में पूजना ही भूल गए हैं। उनमें इसके प्रति प्रेम बड़ा न्यून है। कितने कृतध्न हैं हम लोग?

मंत्र का तीसरा अंश हमें संदेश देता है कि हमे अपनी मातृभूमि की अगाध भक्ति करें तथा ईश्वर का कोटि–कोटि धन्यवाद करें। आजकल मातृभूमि की पूजा करने पर इस पर राजनीतिक विवाद खड़ा हो गया है। मुस्लिम भाई इसको माता मानने से इन्कार करते हैं। उनका कथन है। अल्लाह के सिवाय किसी की भी पूजा अल्लाह की मर्जी के खिलाफ है। मातृ वन्दना गाने में उन्हें सख्त परहेज है।

इस भारत भूमि को स्वतंत्र कराने में राष्ट्र प्रेमियों ने अपने प्राणों की आहुति दी है। सभी समुदायों ने मिलकर आजादी के लिए संघर्ष किया। महात्मा गाँधी ने अहिंसा का पाठ पढ़ाकर जन–जन में अंग्रेज़ों के खिलाफ आन्दोलन छेड़ दिया। दूसरी ओर सुभाष चन्द्र बोस के शब्द में आज़ादी खून बहाने से मिलती है मिन्नतों से नहीं। शहीदों ने अंग्रेज़ों के अत्याचारों व हिंसा के खिलाफ उन्हीं की भाषा में मुँहतोड़ जबाब दिया। कितने शहीद कुर्बान हो गये। उन्होंने भारत को फिरंगियों से स्वतंत्र करा, एक सुदृढ़ राज्य का स्वप्न देखा था। कइयों को तो आज़ादी भी नसीब न हुई। काले पानी की सजा काटते हुए खुशी–खुशी अपने प्राण त्याग दिये। ऐसा है हमारा गौरवशाली इतिहास। कई कवियों ने राष्ट्र प्रेम पर सुन्दर कविता लिखी हैं, जिसने हमें भारत माता की उपासना का संदेश दिया।

इस प्रकार यह मंत्र संदेश देता है कि हमें तीनों देवियों की घर–घर उपासना करनी चाहिए तथा प्रण–प्राण से उसकी रक्षा करें। तीनों संस्कृतियों पर गर्व करें तथा उसके प्रचार–प्रसार में सदा तत्पर रहें।

साभार वेद मज्जरी

☞ पृष्ठ 02 का शेष

यज्ञ प्रसाद

लिया ही नहीं। मुकद्दमा हुआ। वारंट जारी हुए पुलिस पहुँची तो जीवनराम ने रिश्वत देकर पुलिस को टालना चाहा। पर इस बार उसकी कोई चाल नहीं चली। रोया–चिल्लाया। अन्त में मकान छोड़ना पड़ा।

यह जीवनराम है आत्मा, ज्योतिस्वरूप है ईश्वर, और मकान है शरीर। इस मकान का कोई किराया नहीं। यह मकान मिला तो इसलिए था कि ज्ञान के द्वारा कर्म, कर्म के द्वारा उपासना और उपासना द्वारा प्रभु–दर्शन करो। इसके विपरीत बना दिया इसे पापों का *अड्डा। तब छोटा मुनीम अर्थात् कोई छोटी* बीमारी आई, छोटी दुर्घटना, कोई छोटी हानि। बड़ा मुनीम है तनिक बड़ा रोग। सेठ का बड़ा लड़का है – अधिक भयानक रोग। नोटिस है हृदय की गति का कभी–कभी बन्द हो जाना, कानों से कम सुनाई देना। स्नायु – तंत्र का विकृत हो जाना (नर्वस ब्रेकडाउन) है अदालत में मुकद्दमा। अन्तिम रोग वारंट है। पुलिस मृत्यु है। वह आ जाए तो फिर ओषधियों की रिश्वत नहीं चलती। डॉक्टरों को दी जानेवाली फीस के रूप में खुशामद नहीं चलती। तब जीवनराम को यह मकान छोड़ना ही पड़ता है। किसी ने ठीक कहा है–

मैं फूल चुनने आया था बागे – हयात में।
दामन को खार–ज़ार में उलझा के रह गया।।

यज्ञ में मन्त्र–पाठ क्यों?

यह शंका प्रायः की जाती है कि यज्ञ में वेदमंत्र पढ़ने से क्या लाभ होता है? क्या इसके बिना काम नहीं चल सकता? महर्षि दयानन्द ने इसी प्रकरण में इस शंका का बड़ा सयुक्तिक और सतर्क समाधान किया है। महर्षि कहते हैं –

"जैसे हाथ से होम करते, आँख से देखते और त्वचा से स्पर्श करते हैं, वैसे ही वाणी से वेदमन्त्रों को भी पढ़ते हैं। क्योंकि उनके पढ़ने से वेदों की रक्षा, ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना होती है, तथा होम से जो फल होते हैं उनका स्मरण भी *होता है। वेदमंत्रों का बारंबार पाठ करने से वे* कंठस्थ भी रहते हैं और ईश्वर का होना भी विदित होता है कि कोई नास्तिक न हो जाए, क्योंकि ईश्वर की प्रार्थना–पूर्वक ही सब कर्मों का प्रारम्भ करना होता है। सो वेदमंत्रों के उच्चारण से यज्ञ में तो उसकी प्रार्थना सर्वत्र होती है। इसीलिए सब उत्तम कार्य वेदमंत्रों से ही करना उचित है।"

यज्ञ केवल कर्मकांड नहीं

भारतवर्ष में एक समय ऐसा आ गया था जब कर्मकांड को कुछ विशिष्ट क्रियाओं, रूढ़ियों, पद्धतियों और परम्पराओं का ही मूर्त्तरूप मान लिया गया था। ईश्वर की पूजा और परोपकार की भावना का तो प्रायः लोप हो गया था, पर इन प्रक्रियाओं और पद्धतियों को ही यज्ञ का रूप समझ लिया गया था। नवीन मीमांसकों ने बे–सिर–पैर की, दाएँ–बाएँ, ऊपर–नीचे, इस दिशा, उस दिशा से सम्बद्ध कुछ ऐसी ऊल–जलूल विधियाँ प्रचलित कर इनसे "अपूर्व फल" नाम से यजमान को लाभ होने का प्रलोभन देना प्रारम्भ कर दिया था। यहाँ तक कि इन यज्ञों की आड़ में पशु–हिंसा और नर–हिंसा तक का प्रचार इस देश में हो गया। वाममार्गियों के इस कुचक्र के कारण यज्ञशाला का रूप वधशाला और कसाईखाने के सदृश हो गया। एकेश्वर की पूजा, ध्यान, प्रार्थना और यज्ञ से सम्बद्ध ज्ञान और उपासना के अंगों का तो एकदम बहिष्कार हो गया था। कहाँ वाममार्गियों तथा नवीन मीमांसकों के षड्यन्त्र के फलस्वरूप यज्ञ का इतना बीभत्स, कुत्सित, और घृणास्पद स्वरूप! मध्ययुग में भारत में प्रचलित बौद्ध और जैनमत तथा शंकर स्वामी द्वारा कर्मकांड की हीनता और उपासना–कांड पर अत्यधिक बल–यज्ञ संस्था के इस पतन की प्रतिक्रिया रूप ये सब आन्दोलन थे। मध्ययुग के बाद महर्षि दयानन्द प्रथम महापुरुष थे जिन्होंने यज्ञ का वैज्ञानिक और वेदशास्त्रानुमोदित सयुक्तिक स्वरूप समुपस्थित किया। ऋषिवर ने यज्ञ–अनुष्ठान को कर्मकांड का एक अंग बताते हुए उसमें ईश्वर की स्मृति और प्रार्थना को मुख्य कार्य दर्शाया तथा उसे ज्ञान व उपासना की ओर ले–जाने का एक अनिवार्य साधन बताया। 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में 'वेद विषय विचार' में यज्ञ के प्रकरण का उपसंहार करते हुए महर्षि के निम्न शब्द कितने गंभीर, तत्त्वपूर्ण और शुद्ध मार्ग प्रदर्शक हैं –

यज्ञ–परिधि में कर्म, ज्ञान, उपासना–तीनों

"केवल परमेश्वर ही कर्म, उपासना और ज्ञान कांड में सबके इष्टदेव स्तुति, प्रार्थना, पूजा और उपासना करने के योग्य है, क्योंकि गुण वे कहाते हैं जिनसे कर्मकांडादि में उपकार लेना होता है। परन्तु सर्वत्र कर्मकांड में भी इष्ट–भोग की प्राप्ति के लिए परमेश्वर का त्याग नहीं होता, क्योंकि कार्य कारण सम्बन्ध से ईश्वर ही सर्वत्र स्तुति, प्रार्थना, उपासना करने के योग्य होता है।"

सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में यज्ञ और दैनिक होम के लाभों को बताने के बाद यज्ञों के सुविस्तृत प्रचार के लिए ऋषिवर निम्न शब्द बलपूर्वक कहते हैं –

"इसलिए आर्यवरशिरोमणि महाशय ऋषि, महर्षि, राजे, महाराजे लोग बहुत–सा होम करते और कराते थे। जब तक इस होम करने का प्रचार रहा, तब तक आर्यावर्त्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था। अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाए।"

क्रमशः

सत्य असत्य में सत्य को कैसे परखें

● वेद प्रकाश गुप्ता

आर्य समाज के 10 नियमों में से, नियम 4 ''सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।'' तथा नियम 5 ''सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।'' मेरे ज्ञान में संभवतः इन नियमों के पालन करने हेतु, आर्य समाज के किसी ग्रंथ आदि में कोई, दिशा–निर्देश, प्रक्रिया, कसौटियाँ उपलब्ध नहीं है कि विभिन्न कर्मों, तथ्यों को कैसे और किन–किन कसौटियों पर कसकर यानी परखकर सत्य और लाभदायक होने को निर्धारित किया जाय, जिससे किसी से भी जाने अनजाने में त्रुटियाँ न हो सकें एवं आपसी विवाद का सर्वमान्य निराकरण हो सके। इससे सभी जनों को पता चल सकता है कि निश्चित रूप से त्रुटि हुई है या नहीं, अन्यथा हर कोई अपनी–अपनी बात को ही सत्य कहते हैं एवं लिखते हैं। किसी तथ्य, कर्म आदि के सत्य, सत्य के ज्ञान, चयन के लिए इन कसौटियों के ज्ञान का होना अतिआवश्यक, अपरिहार्य है।

हम सभी प्रत्येक आर्य समाजियों को आर्य समाज नियम 4 के निर्देशानुसार सभी कार्यों, कर्मों को करने से पहले उसके लक्ष्य यानी ध्येय, प्रक्रिया आदि को निर्धारित कर लेना चाहिए जो सर्वकल्याणकारी हो और सत्य, असत्य यानी लाभदायक और हानिकारक होने का विचार करके ही करना चाहिए, तभी हम अनजाने में भी पाप कर्मों से बच कर अच्छे पुण्यमय कर्मों को कर सकते हैं। इस लेख का उद्देश्य सत्य, एवं लाभदायक होने की कसौटियों के प्रक्रिया को प्रतिपादित करना है जो उपरोक्त आर्य समाज के नियम 4 तथा 5 के अतिरिक्त अन्य दो आदेश–निर्देश के पालन हेतु निम्नानुसार है।

(1) स्वामी दयानंद जी ने सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक के भूमिका के दूसरे पृष्ठ में लिखा है कि "और जो कहीं–कहीं भूल–चूक से अथवा शोधक तथा छापने के भूल–चूक रह जाए, उसको जानने जनाने पर, जैसा वह सत्य होगा वैसा ही कर दिया जायेगा। जो कोई पक्षपात से अन्यथा शंका व खंडन–मंडन करेगा, उस पर ध्यान न दिया जाएगा, हाँ जो वह मनुष्यमात्र का हितैषी होकर जनावेगा, उसको सत्य–सत्य समझने पर उसका मत *संग्रहीत होगा।" इससे स्पष्ट है कि सत्यार्थ* प्रकाश एवं अन्य पुस्तकों में लिखे तथ्यों, अर्थों भावार्थों में जो–जो त्रुटियाँ संज्ञान में आयेगी, उन सबका सुधार किया जायेगा।

(2) सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास 3 के 27वें पृष्ठ (भिन्न संस्करणों में भिन्न पृष्ठ नम्बर हो सकता है।) में लिखा है "जैसे– ऋग, यजुः, साम और अथर्व चारों वेद ही ईश्वरकृत हैं। वैसे ऐतरेय, शतपथ, – – – ये चार वेदों के उपवेद इत्यादि सब ऋषि–मुनि के किये ग्रंथ हैं। इनमें जो–जो वेद विरुद्ध प्रतीत हों, उस–उस को छोड़ देना।" अतः इन तीनों संदर्भों आदेश–निर्देश के अनुसार हमसे, आपसे किसी भी ऋषि मुनि, स्वामी दयानंद जी एवं अन्य विद्वानों से भी गलती, भूल–चूक अनजाने में हो सकती है और किसी भी पुस्तक में त्रुटि हो सकती है, अतः सभी तथ्यों, कर्मकांडों आदि को सत्य के सभी कसौटियों पर परखा जाना है जिसमें किसी त्रुटि का ज्ञान में आते ही सुधार किया जाना अनुमन्य एवं अतिआवश्यक है। जब हम स्वामी दयानंद जी द्वारा लिखित कालजयी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश के विभिन्न समुल्लास पढ़ते हैं तब हम पाते है कि विभिन्न तथ्यों की सत्यता को सिद्ध करने हेतु स्वामी दयानंद जी ने कुल 3 कसौटियों को लिखा है, जो है, पहला– समस्त वेद एवं अन्य शास्त्र पुस्तकें आदि, दूसरा–पदार्थ विद्या यानी विज्ञान एवं तीसरा–प्रत्यक्ष प्रमाण। प्रत्येक मनुष्य को इन तीनों कसौटियों का ज्ञान होना अतिआवश्यक है जिससे वह स्वयं विभिन्न कर्मों, तथ्यों को इन कसौटियों पर कस सकें, जिससे कि हम सभी अज्ञानता में असत्य को सत्य, लाभदायक मान कर अनजाने त्रुटियों पर त्रुटियाँ न कर सकें। वेद के मूल मंत्रों में कोई त्रुटि नहीं हो सकती है। वेद मंत्रों एवं शास्त्रों के श्लोकों के अर्थ, भावार्थ जिन्हें ऋषियों–मुनियों यानी मनुष्यों ने लिखा है, में त्रुटियाँ हो सकती, जिन्हें तभी सत्य, लाभदायक माना जाना चाहिए, जब वह विज्ञान एवं प्रत्यक्ष प्रमाण के कसौटियों पर भी खरा उतरे अर्थात् वह प्रत्यक्ष में सर्वकल्याणकारी, लाभदायक ही हो। सभी कर्मकांडों को करने की प्रक्रिया ऋषि–मुनियों द्वारा ही लिखी गयी है, अतः इसमें भी त्रुटियाँ हो सकती है और त्रुटि निवारण कर इसे पालन करने के लिये सभी व्यक्ति स्वतंत्र, समर्थ एवं सक्षम हैं। इससे यह भी विदित होता है कि सुधार, सत्य कर्म, कार्य को स्वीकार करने एवं पालन करने के लिए किसी समिति, सभा की स्वीकृति, अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है।

अतः हमें तथ्यों, कर्मों को सत्य के 3 कसौटियों यानी (1) वेद शास्त्रों के आधार पर, (2) वैज्ञानिक तथ्यों, शोधों से एवं (3) प्रत्यक्ष प्रमाण अर्थात स्वयं *एवं अन्य मनुष्यजनों द्वारा अनुभूति कर,* लाभदायक प्रक्रिया को निर्धारित करना है जो सर्वकल्याणकारी हो। यदि इसके अतिरिक्त कोई अन्य कसौटी संज्ञान में आये तो उसको भी संज्ञान में लेना चाहिए।

वेद मन्त्र के भाष्यों और अन्य ग्रन्थों के भाष्यों के भावार्थों को सोचने, अर्थ को लिखने में गलती, त्रुटियाँ हो सकती हैं क्योंकि इनको मनुष्यों के द्वारा ही लिखा गया है। अतः भावार्थों में जो जो गलत हो तो उसे छोड़ देना चाहिए परंतु विज्ञान एवम् प्रत्यक्षप्रमाण में त्रुटि की कोई सम्भावना नहीं है, अतः इन दो कसौटियों पर समस्त एवं कर्मकांड खरा, सत्य, लाभदायक होना ही चाहिए। जिन्हें विज्ञान का ज्ञान नहीं है वह विज्ञान की पुस्तकों, विज्ञान शिक्षित परिचितों की सहायता ले सकते हैं। यदि इस प्रकार का ज्ञान सहायता मिलना संभव न हो तो विज्ञान कसौटी को भी छोड़ा यानी शिथिल किया जा सकता है। मात्र प्रत्यक्ष प्रमाण को आधार पर ही देखना व ग्रहण करना चाहिए क्योंकि यह कसौटी सर्वाधिक महत्त्व का है और इसमें कोई त्रुटि नहीं हो सकती है। स्वामी दयानंद जी ने भी सत्यार्थ प्रकाश सम्मुल्लास 7 के दूसरे पृष्ठ में ईश्वर के अस्तित्व को भी मात्र सब प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सिद्ध किया है। यदि हम कोई कर्म चाहे वह यज्ञ ही हो को जाने–अनजाने में त्रुटिपूर्ण, हानिदायक प्रक्रिया से करते हैं तो हम ही गलती करने और पाप के भागीदार होंगे चाहे उस प्रक्रिया को ऋषि मुनियों व विद्वानों ने ही लिखा हो, क्योंकि उन्होंने तो हमें उपरोक्तानुसार स्वयं सत्य–सत्य, सही–सही, लाभदायक विचारकर ही कर्मों को करने का स्पष्ट आदेश–निर्देश लिखा है। उन्होंने हमें भली प्रकार से सचेत व आगाह कर दिया है जिससे हम समस्त प्रकार से असत्य कर्मों, पापों से बचें और अन्य जनों को भी बचाएँ। यदि पुरोहित अपने यजमान से, गुरु अपने शिष्यों से और माँ–बाप अपने पुत्र–पुत्रियों से गलत, असत्य शिक्षा, कर्म कराते हैं तो पुरोहित, गुरु, माँ–बाप ही दोषी, पाप के भागीदार होंगे।

हम सभी देख सकते हैं कि प्रायः उपरोक्त तथ्यों का पालन, चिंतन, मनन नहीं किया जाता है, विशेषकर वेद मंत्रों एवं शास्त्रों आदि के श्लोकों के भाष्य, अर्थ, भावार्थ ग्रहण करने में कि वह सभी मनुष्यमात्र के हित, लाभ में ही हो। यदि हम स्वामी दयानंद एवं अन्य ऋषि–मुनि पर अटूट विश्वास कर, बगैर इन कसौटियों पर कसे, हम अनजाने में पाप करते हैं तो हम ही पापी होंगे, न कि स्वामी दयानंद जी, ऋषि–मुनि, क्योंकि उन्होंने उपरोक्तानुसार हम सभी को सतर्क, सचेत यानी सही सत्य मार्ग पर ही चलने का आदेश दे दिया है। अब हम प्रत्येक कसौटियों पर चर्चा करते हैं।

(1) वेदों एवं शास्त्रों, ग्रंथों के आधार पर :– समस्त वेद एवं समस्त शास्त्र आदि की भाषा, सामान्य जनों के बोल–चाल, लेखन आदि की भाषा में नहीं है अतः क्रियान्यवन, पालन करने के लिए वेद मंत्रों एवं शास्त्रों के श्लोकों के अर्थ, भावार्थ वही लेना, ग्रहण करना है जो विज्ञान एवं प्रत्यक्ष प्रमाण के कसौटियों पर भी सत्य एवं सर्वकल्याणकारी हो। सभी भाष्यों में से सत्य लाभदायक भाष्य तो केवल एक ही हो सकता है और असत्य अलाभदायक भाष्य कई कई हो सकते हैं। अतः समस्त भाष्यों में एक सत्य लाभदायक भाष्य की खोज, चयन के लिये सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास –1 में दिये गये निर्देश, उदाहरण के अनुसार जो भाष्य प्रसंग प्रकरणानुसार, विज्ञान के अनुसार, प्रत्यक्ष प्रमाण एवं स्वयं अवलोकन, अनुभव के आधार पर सर्वाधिक लाभदायक हो, उसे ही ग्रहण करना चाहिये। इसी समुल्लास 3 में निम्न प्रश्न–उत्तर लिखा है:–

"प्रश्न – मित्रादि नामों से से सखा और इन्द्रादि देवों के प्रसिद्ध व्यवहार देखने से उन्हीं का ग्रहण करना चाहिए।

उत्तर – यहाँ उनका ग्रहण करना योग्य नहीं, क्योंकि जो मनुष्य किसी का मित्र है, वही अन्य का शत्रु और किसी से उदासीन भी देखने में आता है। इससे मुख्यार्थ में सखा आदि का ग्रहण नहीं हो सकता, किन्तु जैसा परमेश्वर सब जगत् का निश्चित मित्र, न किसी का शत्रु और न किसी से उदासीन है, इससे भिन्न कोई भी जीव इस प्रकार का कभी नही हो सकता। इसलिए परमात्मा ही का ग्रहण यहाँ होता है। हाँ, गौण अर्थ में मित्रादि शब्द से सुहृमम‌दादि मनुष्यों का ग्रहण होता है।"

इस उत्तर में लिखे तथ्यों को संज्ञान लेने पर हम पाते हैं कि प्रत्यक्ष प्रमाण में सभी तथ्य उचित हैं और यह सभी को स्वीकार होना चाहिए। इसी समुल्लास में सैन्धव शब्द का उदाहरण भी लिखा हुआ है कि भोजन प्रकरण में इसका अर्थ लवण यानी नमक लेना उचित होगा और गमनादि के समय घोड़ा लेना उचित होगा। स्वामी दयानंद जी ने जिन वेदों का एवं महात्मा नारायण स्वामी जी ने उपनिषदों के भाष्य लिखा है, वह समस्त कसौटियों पर सर्वोत्तम हैं क्योंकि वह भाष्य लिखते समय यह बात ध्यान में रखते थे कि वह समस्त कसौटियों पर सत्य खरा हो जबकि अन्य भाष्यकारों ने विज्ञान एवं प्रत्यक्ष प्रमाण के कसौटियों को ध्यान में नहीं रखा। अतः हमें सभी कसौटियों पर खरा न उतरने वाले अन्य सभी भाष्यों को छोड़ देना चाहिये। नीचे एक उदाहरण मुंडकोपनिषद श्लोक 2/4 के भाष्यों का प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मुंडकोपनिषद के श्लोक **"काली कराली च मनोजवा च सुलेहिता या च सघूम्रवर्णा। स्फुलिंगनी विश्वरुपी च देवी लेलायमाना इति सप्त जिह्वा।** मुण्ड. 2/4" की हिंदी भाष्य के तीन पुस्तकों में *अलग–अलग* भिन्न अर्थ लिखे हैं, जो नीचे लिखा है। अन्य पुस्तकों में इसी श्लोक के अन्य भिन्न–भिन्न अर्थ–भावार्थ लिखे गये होंगे जिनको भी बगैर परीक्षण के ग्रहण नही करना चाहिए। एक पुस्तक का भावार्थ लिखा है कि *"जिस समय अग्नि इन सात दशाओं में अर्थात वेग से जल रही हो उस समय होम करना चाहिए। एक ओर काला धूम्र निकल रहा हो। दूसरे देखने से भयंकर मालूम हो। रक्तवर्ण लाटें निकल रही हों। चारों ओर धूम्र फैलने से आकाश धूम्र वर्ण बना रहे और चिनगारियाँ छोटी–छोटी उठ रही हों। और प्रत्येक वर्ण की प्रकाशकर्त्री*

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

महर्षि दयानन्द के आर्य समाज, वेद व अपने स्वयं के सम्बंध में विचार

● खुशहाल चन्द्र आर्य

1. जो उन्नति करना चाहो तो आर्य समाज के साथ मिलकर उसके उद्देश्यानुसार आचरण स्वीकार कीजिये, नहीं तो कुछ हाथ न लगेगा, क्योंकि हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है, आगे भी होगा, उसकी उन्नति तन, मन, धन से सब जने मिलकर प्रीति से करें। इसलिए जैसा 'आर्य समाज' आर्यावर्त देश की उन्नति का कारण है, वैसा दूसरा नहीं हो सकता।

2. मैं जैसा सत्य धर्म की उन्नति और स्वदेश का उपकार होने में प्रसन्न होता हूँ वैसा किसी अन्य बात पर नहीं।

3. मैं तो अपना तन, मन, धन सब कुछ *सत्य के ही प्रकाशनार्थ समर्पण कर चुका।* मुझसे खुशामद करके अब स्वार्थ का व्यवहार नहीं चल सकता, किन्तु संसार का लाभ पहुँचाना ही मुझे राज्य के तुल्य है।

4. मेरा तात्पर्य किसी की हानि वा विरोध करने में नहीं, किन्तु सत्यासत्य के निर्णय करने–कराने का है।

5. मैं अपना मन्तव्य उसी को जानता हूँ, जो तीन काल में सबको एक–सा मानने योग्य है। मेरा कोई नवीन कल्पना वा मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है। किन्तु जो सत्य है उसको मानना–मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझको अभीष्ट है।

6. वैदिक धर्म प्रचार का कार्य बहुत अच्छा है। हम जानते हैं कि हमारे सारे जीवन में पूरा न हो सकेगा। परन्तु चाहे दूसरा जन्म धारण करना पड़े, मैं इस महत् कार्य को अवश्य ही पूर्ण करूँगा।

7. मैंने कोई नया पंथ चलाकर गुरुगद्दी वा मठ नहीं बनाया है। मैं तो लोगों को मठवादियों के मठों से स्वतन्त्र करना चाहता हूँ।

8. मैं अपने सामर्थ्य के अनुसार वेद का उपदेश करता हूँ। सिवाय उपदेशक के और मैं कुछ अधिकार नहीं चाहता।

9. मैंने इस धर्म कार्य का सर्वशक्तिमान्, सत्यग्राहक और न्याय सम्बन्धी परमात्मा की शरण में शीश धर उसी के सहाय के अवलम्ब से आरम्भ किया है।

10. चाहे कोई हो, जब तक मैं न्यायाचरण देखता हूँ, और जब अन्यायचरण प्रकट होता है, फिर उससे मेल नहीं करता।

11. मैंने आर्य समाज का उद्यान लगाया है, इससे मेरी अवस्था एक माली की सी है। पौधों में खाद डालते समय, राख और मिट्टी माली के सिर पर पड़ ही जाया करती है। मुझ पर राख और धूल चाहे कितना पड़े, मुझे उसका कुछ भी ध्यान नहीं, परन्तु वाटिका हरी–भरी रहे और निर्विघ्न फूले–फले।

12. मेरी अन्तःकरण से यही कामना है कि भारतवर्ष के एक अन्त से दूसरे अन्त तक आर्य समाज स्थापित हो और देश में व्यापी हुई कुरीतियों का उन्मूलित हो जाएँ।

13. मेरा कोई नवीन कल्पना का मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है। किन्तु जो सत्य है उसको मानना–मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना–छुड़वाना मुझको अभीष्ट है। यदि मैं पक्षपात करता तो आर्यावर्त्त में प्रचारित मतों में से किसी एक मत का आग्रही होता।

14. यद्यपि इस ग्रन्थ को देखकर अविद्वान् लोग अन्यथा ही विचारेंगे तथापि बुद्धिमान लोग यथायोग्य इसका अभिप्राय समझेंगे, इसलिए मैं अपने परिश्रम को सफल समझते हुए अपना अभिप्राय सब सज्जनों के सामने धरता हूँ। इसको देख–दिखला कर मेरे श्रम को सफल करें और इसी प्रकार पक्षपात न करके सत्यार्थ का प्रकाश करना मेरा व सब महाशयों का मुख्य कर्तव्य है। सर्वान्तर्यामी, सच्चिदानन्द परमात्मा अपनी कृपा से इस आशय को विस्तृत और चिरस्थायी करें।

15. बारहवें समुल्लास में जो–जो जैनियों के मत के विषय में लिखा है, सो–सो ग्रन्थों के पतेपूर्वक लिखा है। इसमें जैनी लोगों को बुरा न मानना चाहिए क्योंकि जो–जो हमने मत विषय में लिखा है, वह केवल सत्यासत्य के निर्णयार्थ है, न कि विरोध व हानि करने के अर्थ। इस लेख को जब जैनी, बौद्ध व अन्य लोग देखेंगे तब सबको सत्यासत्य के निर्णय में विचार और लेख करने का समय मिलेगा और बोध भी होगा।

16. यह बौद्ध–जैन मत का विषय बिना इनके अन्य मतवालों को अपूर्व लाभ और बोध कराने वाला होगा, क्योंकि ये लोग अपनी पुस्तकों को किसी अन्य मतवालों को देखने, पढ़ने व लिखने को भी नहीं देते। भला यह किन विद्वानों की बात है कि अपने मत की पुस्तक आप ही देखना और दूसरों को न दिखलाना।

17. जैसा मैं पुराण, जैनियों के ग्रन्थ, बाईबल और कुरान को प्रथम ही बुरी दृष्टि से न देखकर उनमें से गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग तथा अन्य मनुष्य जाति की उन्नति के लिए प्रयत्न करता हूँ, सबको करना योग्य है।

18. यद्यपि मैं आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूँ तथापि जैसा इस देश के मतमतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर यथातथ्य प्रकाश करता हूँ, वैसा ही दूरे–देशस्थ व मतोन्नति वालों के साथ भी वर्त्तता हूँ। जैसे स्वदेश वालों के साथ मनुष्य उन्नति के विषय में वर्त्तता हूँ, वैसा विदेसियों के साथ भी तथा सब सज्जनों को भी वर्त्तना योग्य है।

19. वेद, अर्थात् जो–जो वेद में करने और छोड़ने की शिक्षा की है, उस–उसका हम यथवत् करना, छोड़ना मानते हैं। जिस लिए हमको वेद मान्य है, इसलिए हमारा मत वेद है। ऐसा ही मानकर सब मनुष्यों को, विशेष आर्यों को एक मत होकर रहना चाहिए।

20. संसार में जितने दान हैं, अर्थात् जल, अन्न, गौ, पृथ्वी, वस्त्र, तिल, सुवर्ण और घृत आदि इन सब दानों में वेद विद्या का दान सर्वश्रेष्ठ है।

21. प्राचीनकाल में आर्यजन वैदिक संस्कार किया करते थे। वैदिक आचरण युक्त होते थे। इसलिए उनकी सन्तान में ओज होता था, तेज होता था और शूरवीरता होती थी। परन्तु इस युग में लोग इन्द्रियाराम और विषयानन्द को ही प्रधानता दिये हुए हैं, वैदिक संस्कारों का त्याग कर बैठे हैं। लोगों के घरों में कुरीतियों की भरमार है। इसलिए उनकी सन्तान भी निस्तेज, दीन, दुखिया उत्पन्न होती हैं।

22. हम तो यही मानते हैं कि सत्यभाषण, अहिंसा, दया आदि गुण सब मतों में अच्छे हैं बाकी वाद–विवाद, ईर्ष्या–द्वेष, मिथ्याभाषणादि कर्म सब मतों में बुरे हैं। यदि तुमको सत्य मत ग्रहण की इच्छा हो तो वैदिक मत को ग्रहण करें।

23. ओ३म् उसका नाम है, जो कभी नष्ट नहीं होता, उसी की उपासना करनी योग्य है। अन्य की नहीं। सब वेदादि शास्त्रों में परमेश्वर का प्रधान व निज नाम 'ओ३म्' को कहा है, अन्य सब गौणिक नाम हैं। सब वेद सब धर्म अनुष्ठान रूप तपश्चरण जिसका कथन और मान्य करते और जिसकी प्राप्ति की इच्छा करके ब्रह्मचर्य आश्रम करते हैं, उसका नाम 'ओ३म्' है।

यह लेख भी मैंने अति उपयोगी व उत्तम समझकर श्री अत्तरसिंह जी आर्य 'क्रान्तिकारी' (प्रधान हरियाणा आर्य युवक परिषद्) द्वारा लिखित 'महापुरुषों की दृष्टि में दयानन्द व महर्षि के सत्यउपदेश' नामक पुस्तक से उद्घृत किया है। इस पुस्तक में लेखक ने सत्यार्थ प्रकाश के आधार पर महर्षि के समस्त विचारों को प्रकट किया है। इतनी उपयोगी पुस्तक को लिखने के लिए मैं 'क्रान्तिकारी' जी को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ साथ ही सुधि पाठकों से भी विनम्र निवेदन करता हूँ कि वे इस लेख को खुद मन लगाकर पढ़े ताकि मेरा तथा 'क्रान्तिकारी' जी का परिश्रम सफल हो सके।

180 महात्मा गान्धी रोड़ (दो तल्ला)
कोलकता –70007
मो. 9830135794

☞ पृष्ठ 07 का शेष

सत्य असत्य में सत्य ...

अग्नि देवी प्रकाश कर रही हो, यह सात दशा हैं, जिस समय अग्नि में होम करना चाहिये। आशय यह है कि बुझी हुई अग्नि में अग्निहोत्र करना ठीक नहीं, किन्तु अच्छी जलती हुई अग्नि में होम करना चाहिये।"

द्वितीय श्री विद्यारत्न जी द्वारा लिखित हिंदी भाष्य में इस श्लोक का अर्थ लिखा है *"लपटें मारती हुई यज्ञाग्नि रूपी" देवी की सात जिह्वाएँ हैं, 'काली' 'कराली (भूरे रंग की)', मन के समान वेग से उठने वाली 'मनोजवा' (लौयुक्त अग्नि), रक्तवर्ण वाली 'सुलोहिता' (लौरहित कोयले, कंडे की अग्नि), धूम्रयुक्त (धुवाँयुक्त अग्नि) 'सुधूम्रवर्णा', चिनगारियों वाली 'स्फुलिंगिनी', भिन्न भिन्न रूपोंवाली 'विश्वरूप'।*

तृतीय भाष्य में महात्मा नारायण स्वामी जी ने इस श्लोक का अर्थ लिखा है *"अग्नि की ज्वालायें" जो यज्ञ के लिये प्रज्जवलित की जाती हैं। इन्हीं सात रूपों में से किसी न किसी रूप में हुआ करती हैं।"* यह सोचने, शोधने की बात है कि इन तीनों भाष्यों के अर्थ, भावार्थ अलग–अलग हैं जबकि इनमें केवल एक ही सत्य उचित, सर्वलाभदायक हो सकता है। हमें महात्मा नारायण स्वामी जी ही द्वारा लिखा अर्थ लेना चाहिये क्योंकि इसी से ही यज्ञ सबसे अधिक लाभदायक हो सकता है और यही विज्ञान एवं सभी लोगों द्वारा स्वयं एवं अन्य लोगों द्वारा प्रत्यक्ष देखने, अनुभव, अवलोकन, अनुभूति करके सत्यापित किया जा सकता है।

इसी प्रकार समस्त वेद मंत्रों आदि के विभिन्न भाष्यकारों के भावार्थों, अर्थों की तुलना कर सत्य–सत्य भावार्थों का निर्णय करना चाहिए जो सत्य की अन्य कसौटियों जैसे विज्ञान एवं प्रत्यक्ष प्रमाण में भी सत्य लाभदायक हो। किसी भी विद्वान द्वारा वही ग्रंथ, भाष्य लिखना चाहिए जिसे स्वामी दयानंद जी अथवा किसी अन्य विद्वान द्वारा न लिखा गया हो अथवा उनसे कोई त्रुटि, चूक हो गयी हो, जिसे तथ्यों कसौटियों पर सत्य सत्य की जाँच कर, समस्त विवरणों के साथ लिखा जाय, अन्यथा भ्रांतियाँ, त्रुटियाँ ही होगी, जैसा उपरोक्त तीन भाष्यों में है।

क्रमशः

मो. 9451734531,
ईमेल– vedpragupta@gmail.com

भौतिकवादी व आधुनिक जीवन से अधिक सुख एवं शान्तिप्रद अध्यात्म से समाविष्ट जीवन है

● मनमोहन कुमार आर्य

मनुष्य सुख की तलाश में प्रयत्नरत रहता है। उसे कहीं से सही सलाह नहीं मिलती। वह दूसरे लोगों को देखता है जो बैंक बैलेंस सहित भव्य बंगले, कार, एवं घर में सभी प्रकार की सुख–सुविधाओं से युक्त सामग्री के स्वामी है। मनुष्य को लगता है कि सुख इसी का नाम है और वह भी उनका अनुकरण व अनुसरण करता है। माता–पिता अपनी सन्तानों को इसी भावना से अच्छे अंग्रेजी स्कूलों में पढ़ाते हैं। वह समझते हैं कि इंजीनियर, डॉक्टर, उद्योगपति, नेता, बिजीनेस–मैन, सरकारी अधिकारी आदि बनकर सुखी हो जायेंगे। ऐसा प्रायः सभी को लगता तो अवश्य है परन्तु किसी भी धनाड्य व्यक्ति से पूछिये कि क्या वह सुखी है? निश्चिन्त है? सन्तुष्ट है? कल्याण से युक्त है? उसको अच्छी नींद आती है? कोई रोग व शोक तो नहीं है? उसे डर तो नहीं लगता? उसका लक्ष्य क्या है? क्या वह एक सीमा तक सम्पत्ति अर्जित करके पूर्ण सन्तुष्ट, सुखी व शान्ति को प्राप्त कर लेगा? इसका उत्तर देने में उसे कठिनाई होती है। धनवान व सभी सुख–सुविधा की सामग्री से युक्त मनुष्य भी अनेक प्रकार की चिन्ताओं व दुःखों से ग्रस्त है। इसका यही अभिप्राय है कि सम्पन्न व आधुनिक मनुष्य दूसरों को तो सुखी दिखाई देते हैं परन्तु अन्दर से वह असन्तुष्ट एवं अनेक चिन्ताओं से ग्रस्त रहते हैं।

अब एक आध्यात्मिक मनुष्य की बात करते हैं। इस मनुष्य ने वैदिक साहित्य सहित ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का अध्ययन किया है। यह जानता है कि संसार में ईश्वर, जीव व प्रकृति तीन पदार्थों वा सत्ताओं का अस्तित्व है जो अनादि, अनुत्पन्न व अविनाशी है। यह सदा रहते हैं। यह संसार भी प्रवाह से अनादि है। सृष्टि के बाद प्रलय और प्रलय के बाद सृष्टि उसी प्रकार से होती रहती है जैसे कि रात के बाद दिन और दिन के बाद रात्रि आती है। ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, अजन्मा, अनन्त, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सब जीवों वा प्राणियों के सभी कर्मों का साक्षी तथा कर्म–फल प्रदाता है। सुख व दुःख का कारण प्रायः मनुष्यों के शुभ व अशुभ अथवा पाप–पुण्य कर्मों का होना है। आध्यात्मिक मनुष्य स्वाध्याय, ईश्वरोपासना, दैनिक यज्ञ, पितृ व अतिथियज्ञ आदि के महत्व को जानता है और यथाशक्ति इन्हें करता भी है। ऐसा आध्यात्म को जानने वाला व्यक्ति यदि किसी से व्यवहार करेगा तो वह पुरुषार्थ के गुण से युक्त मिलेगा। वह प्रातः 4 बजे ही सो कर उठ जायेगा, ईश्वर का स्मरण करेगा, शौच से निवृत होकर सन्ध्या व हवन करेगा, माता–पिता को प्रणाम व उनके समाचार जानेगा, अपने कार्यालय या व्यवसायिक स्थान पर पुरुषार्थ व सेवा करने जायेगा, घर आकर भी वह स्वाध्याय करेगा, यज्ञ व सत्संग करेगा और मित्रों से सम्पर्क कर उनसे देश व समाज की स्थिति की चर्चा करेगा। वह भ्रष्टाचार की हानियों को जानकर यह दुष्कर्म कभी नहीं करेगा। रविवार के अवकाश के दिन वह आर्यसमाज मन्दिर जाकर यज्ञ व सत्संग में भाग लेगा। वहाँ भजन व प्रवचन सुनकर अपनी शंकाओं का समाधान करेगा और वैदिक विधानों के अनुसार उनका पालन करते हुए ईश्वर को अपना न्यायाधीश व परमेश मानकर सुख व शान्ति से जीवन व्यतीत करेगा। ऐसे व्यक्ति से यदि पूछा जाये कि क्या वह सुखी और सन्तुष्ट है तो वह हाँ में उत्तर देगा और कहेगा कि परमात्मा की उस पर अतीव व असीम कृपा है। उसे कोई कष्ट या दुःख नहीं है। वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उचित धन कमा लेता है। उसका भोजन–छादन व बच्चों की शिक्षा व चिकित्सा भली प्रकार हो रही है। उसे अधिक धन नहीं चाहिये, बस परिवार में सुख व शान्ति बनी रहे। किसी प्रकार से परिवार के लोगों का अपयश न हो। परमात्मा की दृष्टि उसके परिवार पर बनी रहे। सब स्वस्थ, निरोग, ज्ञान प्राप्ति में संलग्न, ईश्वरोपासना और यज्ञादि में सक्रिय व सावधान रहें। हमने इन गुणों से युक्त अनेक व्यक्तियों को देखा है। हमने यह भी देखा है कि ऐसे सज्जन व्यक्तियों के बच्चे भी ज्ञान व शारीरिक बल आदि की दृष्टि से उन्नत होते हैं। ऐसे परिवारों में सुख व शान्ति की सरिता बहती है। वह शुद्ध शाकाहारी जीवन व्यतीत करते हैं। ऐसे लोग व परिवार देश व समाज की उन्नति में सहायक होते हैं। राजनीतिक व आर्थिक स्वार्थ की भावनायें उनमें नहीं होती और वह राजनीति में भी सही दल का चयन करते हैं।

हम यहाँ अपने एक परिचित मित्र की कथा भी वर्णित करना चाहते हैं। यह व्यक्ति 77 वर्ष के हैं। इनके पास न साईकिल है न स्कूटर। प्रतिदिन एक स्थान से दूसरे स्थान पर पैदल ही जाते हैं। शायद 15 कि.मी. प्रतिदिन चलते हैं। सर्दी व गर्मी से भी व्याकुल नहीं होते। यह सरकारी कर्मचारी रहे हैं। इन्हें माह में मात्र 15 हजार रुपये पेंशन मिलती है। दो पुत्र एवं एक पुत्री है। सभी बच्चे विवाहित हैं। बच्चों का भी कुछ भार यह वहन करते हैं। घर में कुछ अतिरिक्त कमरे हैं जिन्हें किराये पर दे रखा है। अपनी पेंशन सहित कुल आय से सुखी जीवन व्यतीत करते हैं। यह स्वाभिमानी हैं। वर्ष में तीन या चार बार रेल द्वारा देश भर की लम्बी लम्बी यात्रायें करते हैं। अपने अनेक मित्रों का ग्रुप बनाकर उन्हें भी ले जाते हैं। ऋषि जन्म स्थान टंकारा की यह 10 से अधिक बार यात्रा कर चुके हैं। दक्षिण के कन्याकुमारी, त्रिवेन्द्रम, रामेश्वरम, बंगलौर, हैदराबार, तिरुपति सहित देश के पूर्वी भागों, पश्चिमी भागों की भी यात्रायें करते रहते हैं। प्रतिदिन योगाभ्यास व सन्ध्या आदि भी करते हैं। अनेक प्रकार के दुःख हैं परन्तु आपको कभी व्यथित नहीं देखा। हंसकर कहते हैं कि जो भी है सब हमारे कर्मों का परिणाम है। इस बात की इन्हें कोई शिकायत नहीं है कि इनके पास बैंक बैलेंस और संसार की अनेक प्रकार की सुविधायें नहीं है। मोबाइल फोन भी बहुत साधारण किस्म का रखते हैं। अपने सभी मित्रों व परिवारों के प्रति इनमें सहानुभूति व सदभावना है। हमें लगता है कि यह सब इनमें वैदिक जीवन पद्धति के गुणों के कारण से है। इनके विषय में हमारा कहना है कि आध्यात्मिक ज्ञान होने से मनुष्य की राह आसान हो जाती है। आध्यात्मिक जीवन जीने वाला मनुष्य दुःखों में भी स्वयं को शान्त व सन्तुष्ट रख सकता है और इसके लिये ईश्वर व अन्य किसी को दोष न देकर प्रसन्न रहते हुए सभी समस्याओं को पार कर लेता है।

आधुनिक जीवन का तात्पर्य अत्यधिक धन कमाना और उससे सुख सुविधाओं की वस्तुओं का संग्रह कर सुख भोगना मात्र ही है। इसमें वैदिक आध्यात्मिक गुणों व नित्य कर्मों का मिश्रण या तो होता ही नहीं या अन्धविश्वास व अज्ञानतापूर्ण ही होता है। धनिक व आधुनिक लोगों का सारा समय स्कूली किताबें पढ़ने, धन कमाने, सुख–सुविधायें एकत्र करने व उनके भोग में बीतता है। वह शुभ कर्मो यथा ईश्वर की उपासना, अग्निहोत्र आदि श्रेष्ठ कर्म, माता–पिता–विद्वानों व वृद्धों का सेवा सत्कार में समय नहीं दे पाते। आजकल तो सरकार ने भी परिवार में केवल पति–पत्नी व उनके बच्चों को ही सम्मिलित किया है। वही माता–पिता परिवार के अंग कहलाते हैं जो आर्थिक दृष्टि से अपने पुत्र पर निर्भर होते हैं। जिनके एक से अधिक पुत्र होते हैं उनकी दशा वृद्धावस्था व रोग की अवस्था में अच्छी नहीं रहती। यदि बच्चे अधिक योग्य होकर विदेश चले गये हों तो माता–पिता का जीवन सुखमय न होकर दुःखमय होता है। इसके अनेक कुपरिणाम सामने आ चुके हैं। माता–पिता मर गये और पड़ोसियों को उनकी अन्त्येष्टि करानी पड़ी। धन व सुविधाओं की वृद्धावस्था में अधिक भूमिका नहीं रह जाती। वृद्धावस्था में तो आवश्यकतायें न्यून व न के बराबर हो जाती हैं। भोजन भी अल्प मात्रा में करके काम चल जाता है। ऐसी अवस्था में सन्तानों व पौत्र–पौत्रियों आदि का सान्निध्य व सन्तानों का सम्मानपूर्ण एवं सेवायुक्त व्यवहार ही सबसे अधिक सुखदायक होता है। इस सुख में आधुनिकता बाधक होती है। अतः आर्यसमाज की वैदिक विचारधारा की दृष्टि से देखें तो मनुष्य को आर्थिक समृद्धि के साथ स्वाध्याय, योगाभ्यास, ईश्वरोपासना तथा यज्ञ एवं परोपकार आदि के कार्यों का त्याग न कर इन्हें यथाशक्ति करना चाहिये। अपने माता–पिता सहित परिवारजनों व कुटुम्बियों के प्रति भी उदार व सहयोगी होना चाहिये। जहां तक सम्भव हो माता–पिता को साथ रखें व उनके सुखों पर ध्यान दें। देश व समाज के प्रति जागरुक रहकर अपने मताधिकार का भी सदुपयोग करना चाहिये। किसी विचारधारा के लोगों का समर्थन नहीं करना चाहियें जो धार्मिक भेदभाव व तुष्टिकरण के भावों व विचारों के समर्थक रहे हैं। देश व समाज के प्रति भी विवेकपूर्ण दृष्टि रखनी चाहिये। समाज व देश को हानि पहुंचाने वाले लोगों, संगठनों व सम्प्रदायों की गतिविधियों पर भी दृष्टि रखनी चाहिये और स्वधर्म की उन्नति के लिये सक्रिय रहना चाहिये। यही सन्तुलित व विवेकपूर्ण जीवन कहा जा सकता है। ऐसा करके हम देश व समाज सहित अपने लौकिक एवं परजन्म का हित कर सकते हैं। इसी के साथ हम इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोन:09412985121

पत्र/कविता

विचारधारा, सिद्धांत और नीति का स्थान जुमलों ने ले लिया है

वित्तमंत्री का बजट–भाषण इतना प्रभावशाली था कि विपक्ष तो हतप्रभ–सा लग ही रहा था। वह अकेला भाषण सरकार के पिछले पांच वर्षों के सारे भाषणों के मुकाबले भी भारी पड़ रहा था और मुझे याद नहीं पड़ता कि किसी बजट–भाषण ने लोकसभा में ऐसा चमत्कारी माहौल पैदा किया, जैसा कि वित्तमंत्री के भाषण ने किया लेकिन आश्चर्य है कि रोजगार के बारे में वित्तमंत्री ने कोई जिक्र तक नहीं किया। यदि नोटबंदी और जीएसटी से सरकार की आमदनी कई लाख करोड़ रु. बढ़ गई तो यह समझ में नहीं आता कि देश में बेरोजगारी क्यों बढ़ती जा रही है। नेशनल सेंपल सर्वे आफिस की ताजा रपट कहती है कि इस समय देश में जैसी बेरोजगारी फैली हुई है, वैसी पिछले 45 साल में कभी नहीं फैली। चपरासी की दर्जन भर नौकरियों *के लिए लाखों अर्जियाँ क्यों आ जाती हैं?* अर्जियां देनेवालों में कई लोग बी.ए. और एम.ए. भी होते हैं। क्या यह हमारे लिए शर्म की बात नहीं है? पिछली सरकार के दौरान कितना ही भ्रष्टाचार हुआ है लेकिन उस दौरान आज की तुलना में बेरोजगारी काफी कम थी। अब उससे वह तीन गुनी ज्यादा है। 15 से 29 साल के ग्रामीण नौजवानों में 2017–18 में 17.4 प्रतिशत लोग बेरोजगार हैं जबकि 2011–12 में वे सिर्फ 5 प्रतिशत थे। ये आंकड़े एक अंग्रेज़ी अखबार में क्या छपे कि सरकार में कोहराम मच गया। नीति आयोग ने कहा कि इन आंकड़ोंवाली रपट को सरकार ने प्रमाणित नहीं किया है। इस पर राष्ट्रीय आंकड़ा आयोग के दो गैर–सरकारी सदस्यों ने अपने इस्तीफे दे दिए हैं। उन्होंने कहा है कि आयोग की रपट अपने आप में प्रामाणिक मानी जाती है। उस पर सरकारी ठप्पे की कभी ज़रुरत नहीं पड़ती है। यह काफी गंभीर मामला है। इसके कारण यह भी शक पैदा होता है कि सरकार ने अभी तक जी.डी.पी. (सकल उत्पाद) आदि के बारे में जो भी आंकड़े पेश किए हैं और वित्तमंत्री ने अपने बजट–भाषण में अर्थ–व्यवस्था का जो रंगीन चित्र पेश किया है, वह भी कहीं *फर्जी आंकड़ों पर तो आधारित नहीं है?* कोई दल या नेता यह नहीं बता रहा कि साढ़े छह करोड़ बेरोजगार नौजवान क्या करें, कहां जाएं, अपना पेट कैसे भरें? देश की दोनों प्रमुख पार्टियाँ और उसके नेता किसानों, नौजवानों, महिलाओं, करदाताओं को तरह–तरह की चूसनियाँ (लॉलीपॉप) पकड़ा रहे हैं ताकि उनसे अपने वोट पटा सकें। विचारधारा, सिद्धांत और नीति का स्थान जुमलों ने ले लिया है।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक
dr.vaidik@gmail.com

****

सुने हुये उपदेश को, तू जीवन में ढाल

चांदी परख कुठाल पर, सोना भट्ठी होय।
परख मानव की होती, भला कहे सब कोय।।

यश की भूख तो, हर दम बढ़ती जाय।
जितनी सुनो और बढ़े, कभी रोक न पाय।।

तारीफ सुनकर फूले, मन मतवाला होय।
मन भूखा तारीफ का, अपना विवेक खोय।।

तेज परिंदा आ फंसा, इक शब्दों का जाल।
प्रशंसा मोती चुगे, बने जी का जंजाल।।

अच्छा स्वभाव तो सदा, मधु मक्खी सा होय।
पराग चुन शहद बनाए, काम और के आय।।

पानी उतरे आंच से, फिर शीतल हो जाय।
केवल सुन उपदेश को, आदत सुधर न पाय।।

सुने हुये उपदेश को, तू जीवन में ढाल।
मत विपरीत कभी चलो, कर लो सीधी चाल।।

पति पत्नी का स्वभाव, जीवन की बुनियाद।
पति पत्नी पूरक बनें, तब हो घर आबाद।।

पूरण समझे आप को, और सीख ना पाय।
जो जीवन भर सीखता, वही सीख कुछ जाय।।

हर झाड़ से पराग चुन, गुण ग्रहण कर पाय।
मधु मक्खी सा मधु बना, तू मधुमय हो जाय।।

नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'
602, जी.एच – 53 सैक्टर–20,
पंचकुला हरियाणा
मो. 09437608688

अमृत फल आँवला फल एक गुण अनेक

आयुर्वेदिक मत– अम्ल प्रधान लवणरहित, पाँच रस, लघु रूक्ष, शीत गुण, शीत वीर्य और मधुर वियाक है– यह त्रिदोषहर विशेषकर पित्प शामक है। मेध्य वल्य रोचक दीपन यकृत उत्तेजक तृष कफघ्न वृस्य मूत्रल प्रमेहघ्न कुस्कघ्न ज्वरघ्न और रसायन है। दाहयंत्रिक सिर शूल तथा मूत्रावरोध में इसका लेप करते हैं। नेत्र रोगों में इसका स्वरस डालते हैं खालित्य और पालित्य आँवलों से सिर धोते है। आयुर्वेद का च्यवनप्राश इसी से बनता है। किसी भी ऋतु प्रकृति में देश फल और वय के लिए आँवलें पथ्य है। वीर्यवर्धक, कांतिवर्धक त्रिदोष नाशक उत्तम रसायन है रक्त पित्तनाशक रक्त शोधन सारक और रूचि कर है।

वैज्ञानिक मत– के अनुसार आँवलों में विटामिन सी भारी मात्रा में है। नारंगी और संतरे, मौसम्मी की तुलना में आँवलों में **विटामिन सी** भारी मात्रा में है– लगभग बीस गुना अधिक है। उपरान्त लोह तत्त्व भरपूर है। शरीर में नया रक्त पैदा करता है। इसके फल से फौलिक एसिड, टैनिक एसिड, शर्करा, अम्ल व्यूमिन कैल्शियम है। डॉ. शौरी ने लिखा है कि ताजा फल चिकना, पेशाब साफ लाने वाला और हल्का दस्तावर होता है, सूखा फल शीतल पाचक और उत्तेजक होता है

इसके प्रयोग से शरीर या रोग की प्रतिरोधक क्षमता सुरक्षित रहती है। बार–बार होनी वाली बीमारियों से बचाव करने वाले **विटामिन सी** का सबसे बड़ा भंडार है। इसका **विटामिन सी** पकाने, सुखाने, तलने, पुराना, होने पर भी नष्ट नहीं होता।

आँवला मैटाबोलिक क्रिया शीतलता को बढ़ाता है। इससे शरीर स्वस्थ तेजस्वी शक्तिशाली रहता है। इसके सेवन से हड्डियाँ पुष्ट होती है जोडों के दर्द में आराम मिलता है। आँवला भोजन को पचाने में सहयोग करता है। आँवला में बैक्टीरिया से लड़ने की क्षमता होती है और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है।

हरिश्चन्द्र आर्य
अधिष्ठाता उपदेश विभाग
प्रचार कार्यालय, अमरोहा, उत्तर प्रदेश
मो. 05022 263412

****

मदिरा (शराब) के व्यापार में वृद्धि

यह खेद है कि भारत वर्ष में सदियों पूर्व दूध की नदियां बहती थी परन्तु आज मदिरा की नदियां बह रही है। समाचार पत्रों के आंकड़ों के अनुसार केन्द्र और राज्य की सरकारों के राजस्व में मदिरा और अन्य नशीले पदार्थों के व्यापार से 37 प्रतिशत से ज्यादा राजस्व प्राप्त होता है। समाज मौन क्यों है? विराम कब लगेगा? यह भी उल्लेखनीय है कि भारतवर्ष के समस्त धार्मिक संस्थान मदिरा और अन्य मादक पदार्थों के सेवन पर प्रतिबंध लगाते है। चरक संहिता में भी नशीले पदार्थों के सेवन को स्वास्थ्य के लिए हानिकारक बताते हैं।

विगत दो दशक में प्रत्येक सरकार मादक पदार्थों के विरूद्ध समय–समय पर अपराधिक नियम लागू कर रही है। परन्तु माद पदार्थों का व्यापार तेजी से बढ़ रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारी संस्थायें भी मादक पदार्थों के व्यापार को ज्यादा प्रोत्साहित कर रही है। क्या आर्य समुदाय इस गंभीर बिंदु पर विराम लगाने का प्रयास करेगा?

कृष्ण मोहन गोयल
अमरोहा

****

आर्य कन्या स्कूल परिसर में लगा चिकित्सा शिविर

24 वाँ निःशुल्क रोग निदान शिविर आर्य कन्या विद्यालय समिति एवं श्री रामजीलाल आर्य कन्या छात्रावास समिति के तत्त्वावधान में हरीश हॉस्पिटल के सौजन्य से वैदिक विद्या मन्दिर, स्वामी दयानन्द मार्ग अलवर में आयोजित हुआ। शिविर में बाहर से पधारे रोग विशेषज्ञ चिकित्सकों का स्वागत विद्यालय छात्राओं द्वारा तिलक लगाकर किया गया।

शिविर का प्रारम्भ यज्ञ से हुआ जिसमें सभी डॉक्टर्स ने आहूतियाँ दी। तदुपरान्त सेमिनार प्रारम्भ हुआ। जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त पद्मश्री डॉ. गणेश के. मणि, डॉ. एस.के. गुप्ता, डॉ. प्रमोद शर्मा, डॉ. सतीश माथुर, डॉ. एस.के. शर्मा, डॉ. आलोक पाण्डे, डॉ. राजशेखर रेड्डी, डॉ. डी.एस. माथुर, डॉ. हरीश गुप्ता, डॉ. प्राची गुप्ता, डॉ. लवेश गुप्ता आदि ने भाग लिया। मंच का संचालन करते हुए डॉ. हरीश गुप्ता ने प्रश्नों के माध्यम से सम्बन्धित रोगों के बारे में रोगों के विशेषज्ञों से जानकारी प्राप्त की। डॉ. गणेश के. मणि ने हृदय के ऑपरेशन के बारे में नई तकनीक को अधिक सुरक्षित बताया और कहा कि इसमें किसी प्रकार का कोई खतरा नहीं रहता।

अंत में अध्यक्ष जगदीश प्रसाद गुप्ता द्वारा प्रेरक उद्बोधन दिया गया। समिति की निदेशक कमला शर्मा ने बताया कि इस मौके पर आयोजित विज्ञान प्रदर्शनी का उद्घाटन मुख्य अतिथि राजेन्द्र कुमार खूंटेटा उप महाप्रबंधक एवं क्षेत्रीय प्रमुख भरतपुर रीजन, बैंक ऑफ बडौदा, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति पद्मश्री डॉ. गणेश के. मणि एवं डॉ. एस.के. गुप्ता ने फीता काटकर किया। इस शिविर में लगभग 500 रोगियों का निःशुल्क परामर्श दिया गया।

सोहन लाल डी.ए.वी. कॉलेज अम्बाला में मनाया गया गणतंत्र दिवस

सोहन लाल डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अम्बाला शहर में भावी अध्यापकों द्वारा गणतंत्र दिवस मनाया गया। डॉ. सुषमा गुप्ता मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित हुई। छात्राध्यापकों द्वारा रंगारंग कार्यक्रम का आयोजन किया, जिसमें भाषण, कविता, नृत्य और राष्ट्र भक्ति से ओत-प्रोत गीतों से सारा वातावरण देश भक्ति पूर्ण हो गया। मंच का संचालन बी.एड. प्रथम वर्ष की छात्रा दीप्ति और महक ने किया। इन भावी अध्यापकों ने इस पर्व के माध्यम से यह साबित किया कि गणतंत्र दिवस केवल एक पर्व नहीं बल्कि हमारे स्वाभिमान का प्रतीक है।

इस अवसर पर डॉ. नरेन्द्र कौशिक, डॉ. नीलम लूथरा, डॉ. सतनाम कौर, डॉ. पूजा, श्री पवन कुमार, श्रीमती नीरूपमा, श्रीमती रश्मि, सुश्री हीना कालरा, श्रीमती हितेश, श्रीमती मोनिका, श्रीमती हरप्रीत कौर ने उपस्थित रहीं तथा सभी को गणतंत्र दिवस की बधाई दी।

कार्यक्रम के अंत में डॉ. नीलम लूथरा ने सभी भावी अध्यापकों को कार्यक्रम का सफलतापर्वूक पूर्ण करने पर बधाई दी और कार्यक्रम में उपस्थित छात्राध्यापकों तथा प्राध्यापकों का धन्यवाद किया।

डी.ए.वी संस्थाओ द्वारा प्रि. डॉ. मोहनलाल शर्मा सम्मानित

डी.ए.वी स्कूल पातडां और नाभा में प्रि. डॉ. मोहनलाल शर्मा को पंजाब स्कूल शिक्षा बोर्ड के सदस्य मनोनीत होने पर एवं पंजाब मुख्य मंत्री कै. अमरिंदर सिंह द्वारा गणतंत्र दिवस के राजकीय समारोह में सम्मानित होने तथा उनके सम्मान के लिए विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया गया जिसमें मुख्य रूप से श्री एच.आर.गंधार जो कि डी.ए.वी कॉलेज प्रबंधक समिति के प्रधान के विशेष सलाहकार हैं – द्वारा प्रि. डॉ. मोहनलाल शर्मा को उनके गत 25 वर्षों से शिक्षा एवं समाज सेवा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन करने, ग्रामीण स्कूलों के विकास के लिए अनथक प्रयास करने तथा गरीब बच्चों को मुफ्त शिक्षा प्रदान करने के लिए विशेष रूप से सम्मानित किया गया।

इस कार्यक्रम में डी.ए.वी. पातडां, डी.ए.वी. नाभा, डी.ए.वी. ककराला , डी.ए.वी. बादशाहपुर, डी.ए.वी. पटियाला (भूपिंदर रोड), डी.ए.वी. ग्लोबल तथा डी.ए.वी. पुलिसलाइन के प्रधानाचार्य तथा मेनेजमेंट कमेटी के सदस्य विशेष रूप से शामिल हुए तथा उन्होंने प्रि. डॉ. मोहनलाल शर्मा को उनकी इस उपलब्धि के लिए हार्दिक बधाई दी। उन्होंने कहा कि यह सभी डी.ए.वी. संस्थाओं के लिए बड़े गर्व की बात है कि प्रि. डॉ. मोहनलाल शर्मा ने अपनी योग्यता के बल पर राज्य में एक विशेष स्थान ग्रहण किया है तथा डी.ए.वी. परिवार का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

अंत में प्रि. डॉ. मोहनलाल शर्मा ने सभी उपस्थित लोगों का धन्यवाद एवं आभार प्रकट करते हुए कहा कि उनका समस्त जीवन डी.ए.वी. एवं समाज के उत्थान के लिए समर्पित रहेगा।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

डी.ए.वी. सेक्टर-49, गुरुग्राम ...

की प्रस्तुति प्रारंभ की गई जो कि 'कचरा प्रबंधन', गणित के मॉडल, जैविक खेती, यातायात एवं आवागमन जैसे समसामयिक एवं महत्त्वपूर्ण विषयों पर आधारित थे।

सात मीटर लंबे गुम्बद आकार के बने प्लेनेटेरियम में बच्चों की उम्र के हिसाब से कार्यशालाओं की व्यवस्था की गई थी जो कि बच्चों के बीच उत्सुकता का खास केंद्र बना रहा। वहीं बच्चों को 200 मीटर लंबे टेलीस्कोप के माध्यम से सूर्य की आकाशीय खूबसूरती को देखने का अवसर प्रदान किया गया। गतिविधि 'प्रोजेक्ट परिधि' के अंतर्गत बच्चों को बताया गया कि पृथ्वी की परिधि को कैसे मापते हैं। इस प्रदर्शनी के द्वारा विद्यार्थी अपने अंदर नई वैज्ञानिक चेतना को जगाने के लिए प्रेरित हुए।

आयोजन के 'समापन समारोह' के अवसर पर मुख्य अतिथि श्री मुनीश शर्मा तथा डॉ. श्वेता सिंह उपस्थित थे। निर्णायक मंडल में डा. एन.के. सहगल, प्रोफेसर रामावतार, डॉ. लवलीन शुक्ला, डॉ. के. एल. पटेल, डॉ. राकेश कुमार जैन तथा डॉ. शुभांक जैन ने सभी विज्ञान के मॉडलों का निरीक्षण कर कुछ विशिष्ठ मॉडल' का चयन किया जो इस प्रतियोगिता के राष्ट्रीय स्तर के लिए जा सकेंगे।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 13/14-02-2019

एल.आर.एस. डी.ए.वी. अबोहर में स्वास्थ्य पर व्याख्यान

एल.आर.एस. डी.ए.वी. सीनियर सेकेंडरी मॉडल स्कूल अबोहर में पंजाब सरकार, पंजाब शिक्षा विभाग और जिला शिक्षा अधिकारी फाजिल्का के आह्वान पर तंदरुस्त पंजाब मिशन के अंतर्गत एक व्याख्यान का आयोजन किया गया। व्याख्यान का मुख्य विषय, सर्दी में बच्चों के स्वास्थ्य की संभाल कैसे करें, था। स्कूल मेडिकल ऑफिसर डॉ श्रीमती नरिंदर कौर इस अवसर पर मुख्य वक्ता थी।

डॉ नरिंदर कौर द्वारा प्रातःकालीन प्रार्थना सभा में विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए कहा कि आजकल सर्दी के मौसम में बच्चों व अभिभावकों को बच्चों के स्वास्थ्य के प्रति विशेष ध्यान देना चाहिए। उन्होंने कहा कि परीक्षाओं के दिन नजदीक होने के कारण विद्यार्थियों को भी सर्दी में अपने स्वास्थ्य के प्रति अति सचेत रहना चाहिए। डॉक्टर नरिंदर कौर ने कहा विद्यार्थियों को सुबह सुबह अपना सिर ढक कर रखना चाहिए। पाँवों में उचित मोजे और बूट पहन कर रखने चाहिए ताकि ठंड से बचाव हो सके। उन्होंने कहा विद्यार्थियों को सर्दी के मौसम में अपने खान–पान की तरफ भी उचित ध्यान देना चाहिए। इस मौसम में मेवों के साथ साथ मौसमी फलों और सलाद भी उचित रूप से खाना चाहिए। उन्होंने कहा कि इस मौसम में ठंडी चीज़ें का परहेज़ करना चाहिए और गर्म पानी पीना चाहिए।

डी.ए.वी. थर्मल कालोनी पानीपत में 'स्पैक्ट्रम' कार्यक्रम सम्पन्न

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल थर्मल कालोनी पानीपत में आज "स्पैक्ट्रम" कार्यक्रम बड़े ही उल्लास के साथ मनाया गया। जिसमें बच्चों ने विभिन्न प्रकार की फन गेम्स, नृत्य एवं बेबी शो में व उनके अभिभावकों ने सामाजिक जीवन में काम आने वाले विभिन्न विषयों के बारे में जानकारी प्राप्त की जिसमें फिजिक्स के माध्यम से विद्यालय के छात्रों अनिकेत, तरुण ने अध्यापिका अल्का अग्रवाल के नेतृत्व में बरसात आने की सूचना देने वाले अलार्म सिस्टम एवं विभिन्न प्रकार के स्कोप व उनके प्रयोग की जानकारी दी।

छात्रा रचना, खुशी व हिमांशी ने अध्यापिका बिन्दिया परूथी के नेतृत्व में कैमिस्ट्री के माध्यम से खाने की शुद्धता को परखने की सामान्य तकनिकों के बारे में जानकारी दी। छात्रा कशिश, ऋद्धिमा, प्रियंका ने अध्यापिका संजुला कक्कड के नेतृत्व में बीमारियों से बचने के लिए सन्तुलित भोजन की जानकारी देते हुए बताया कि हमें ज्यादा वसा युक्त भोजन नही करना चाहिए। भोजन में दलिया व अन्य फाईबर युक्त आहार की मात्रा को बढाना चाहिए। बच्चों ने बताया की हमें मीठे का प्रयोग कम से कम करना चाहिए क्योंकि मीठे में डाले जाने वाला सल्फर शरीर को बहुत हानि पहुँचाता है।

बच्चों के एकल नृत्य में बच्चों ने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया जिसमें अवनी रोहिला एवं तरंग ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। लडको के बेबी शो में केशव ने व लडकियों में अवनीत कौर ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। विजेता बच्चों को प्राचार्या श्रीमती ऋतु दिलबागी एवं श्री आर.पी. राठी प्राचार्य डी.ए.वी. अम्बाला ने पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित किया।

प्राचार्या श्रीमती ऋतु दिलबागी ने कहा कि डी.ए.वी. थर्मल बच्चों को शिक्षा के साथ–साथ संस्कार भी प्रदान करता है हमारा मकसद एक सभ्य व संस्कारी नागरिक का निर्माण करना है।

डी.ए.वी बिलगा में मनाया गया 'ग्रैंड पेरेन्टस डे'

शीला रानी तांगडी डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल बिलगा में ग्रैंड पेरेन्टस डे के रूप में आशीर्वाद नामक समारोह का आयोजन किया गया। समारोह के आरंभ में नन्हें–मुन्ने बच्चों द्वारा सभी मेहमानों का स्वागत परम्परागत विधि से किया गया। समारोह में डी.ए.वी. सी.एम.सी. के वाइस प्रेसीडेंट जस्टिस एन.के. सूद मुख्यातिथि के रूप में पहुँचे। स्कूल की ए.आर.ओ. डॉ. रश्मि बिज समारोह में गेस्ट ऑफ ऑनर के रूप में उपस्थित थी।

मुख्यातिथि जस्टिस एन.के. सूद ने स्कूल द्वारा किए गए इस समारोह की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि स्कूल द्वारा दिए गए संस्कार तभी सार्थक होंगे यदि घर के सदस्यों द्वारा पूर्ण सहयोग दिया जाए।

डॉ. रश्मि बिज ने अपने भाषण में कहा कि सब कुछ गूगल पर सर्च नहीं किया जा सकता है, दादा–दादी व नाना–नानी देते हैं। इस अवसर पर बच्चों ने दादा–दादी के जीवन पर आधारित गीत, समूह नृत्य, लघु नाटिका एवं भंगडा आदि प्रस्तुत करके सभी दर्शकों का मन मोह लिया।

स्कूल के प्रिंसीपल श्री रवि शर्मा ने बताया कि स्कूल अपने सिल्वर जुबली वर्ष अर्थात् पच्चीसवें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। इस समारोह का उद्देश्य बड़े बुजुर्गों का आशीर्वाद लेने के साथ–साथ आज की पीढ़ी में नैतिक मूल्यों का संचार करना भी है।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**